हितशिक्षा

(१) जैसे सूर्यके उदय होते ही सब स्थानका अंधकार नाश हो जाता है इसी प्रकार पवित्र भावनासे सब दोष दुर्गुण दुःख और पापोंका नाश हो जाता है।

(२) जिस स्थान पहुँचना है उस दिशाके तरफ सिध चलनेमे शेघ्र अटवी उल्लंघन हो जाती है उसी प्रकार शुद्ध भावनारूपी सन्दिशा मीलनेसे दुःखरूपी विशाळ वनको शिघ्र पार हो जाते हैं।

(३) आत्मकल्याणकी इच्छा होवे तो हमेशा उत्तम भावनाका चिंतन कर, जिसके द्वारा सदाचार प्राप्त होकर इस लोक और परलोक संबधी सब दुःखोंका नाश होवेगा।

(४) यह भावनाओं आप स्वयं पढें दूसरोंको सूनावें व पढनेके लिये देवें।

(५) हर समय जीव शुद्ध और कुछ विचार करता ही रहता है और हर समय कर्मोंका (सस्कारका) बधन होता है इसलिये उत्तम भावना चिंतवन करके पवित्र विचार ही करना चाहिये।

(६) कीसी देश कीसी समय कीसी स्थान, कीसी हालतमें ये भावना वाच सकतें है। सुन सकतें है। व चिंतन कर सकतें है। कारण आत्मा उपयोगहीन होता ही नहिं तो शुद्ध उपयोगका कारण उत्तम भावना हर कीसी समय भासकतें है इसमें कोई मतान्तर नहिं है शुद्ध आत्मकल्याणके तत्व अनेक शास्त्र व पूर्वाचार्योंके वचनानुसार देशभाषामें पकत्र किये है ये सब धर्म व सब सप्रदायके पढनेयोग्य है कारण इसमें कोइ धर्म व सप्रदायकी बाधक विषय लिया हि नहिं गया।

आत्मजागृति भावना

भावनाओंकी महिमा

(१) इस पुस्तकमें जो नवकार मत्र अर्थ और भावनाके साथमें है उसको अच्छी तरह पढकर मनन करनेसे नवकार मत्रके जो गुण हमारे अन्दर शक्तिरूप (छुपे हुए) हैं वे प्रकट होते हैं और अपना आत्मा परमेष्टिरूप बनता है । सब मगलमें सर्वोत्कृष्ट मगल यही है

(२) सदा सुबुद्धि और समता भाव प्रकट करनेके लिए मैत्रि आदि चार भावना हैं और इन भावनाओं ही से समकित गुण प्रकट होता है और वह गुण प्रकट होनेके बाद (समकितगुण) हमेशा स्थिर रहता है इस भावनाके बिना सम्यक्त्व और चारित्रमें स्थिर नहीं रहा जाता

(३) आत्माकी मूल सत्ता मिथ्यात्व मोहसे दबी हुई है। समकित (आत्मबोध) भावना भावनेसे यह आत्माकी मूल सत्ता प्रकट होती है। जहाँ तक केवल ज्ञान उत्पन्न नहो वहातक यह समकित भावना हमेशा तीनवार जरूर भावनी चाहिये क्योंकि सब तीर्थंकरोंने मिथ्यात्व मोहका नाश यह समकित भावना भावने से ही किया है। ऐसा पूर्वाचार्य महाराजने फरमाया है। इसलिये मुमुक्षु खुद विचार सकता है कि इस भावनाको भावनेकी कितनी आवश्यकता है।

(४) मिथ्यात्व नाश करनेकी भावना अपना अनत चतुष्टय रूप प्रकट करनेवाली तथा महा मोहको नाश करनेवाली है

(५) सद्गुण प्राप्तिकी बहत्तर भावना आलयणा (पापाकी शुद्धि) रूप है और वह अनादिकालके मिथ्यात्व आदिसे बाधे हुए कर्मोंका नाश करनेके लिये वज्र समान है

(६) बारह वैराग्य भावनासे ही श्री तीर्थंकर भगवानने अविचल सुखकी प्राप्ति की है विषय वासनाओंकी शांति इन भावनाओंके चिंतन करनेसे होती है

(७) श्री ठाणागजी सूत्रमें फरमाया है कि हमेशा तीन मनोरथका चिंतन करनेसे अपूर्व लाभ और कर्मोंका नाश होता है

(८) साधुसाध्वीकी भावना तीन लोककी सम्पदा प्रकट करानेवाली अर्थात् निर्वाण पद देनेवाली है

(९) चौदह नियम मेरु (पर्वत) जितना पाप घटा करके राई जितना रखनेवाले हैं। सूलीकी सजासे बचाकर सूईकी सजा रखने वाले हैं

(१०) पात्रापात्रकी भावना अद्‌भूत भावना है

(११) यह विद्यार्थीकी भावना ऐसी है कि हजारों कलाचार्यों और विद्याचार्यो के पास पढनेसे भी जो अतरंग सद्‌गुण प्राप्त नहीं होता है वह इस भावनाके भावनेसे होता है

(१२) दिनचर्याकी इकीस भावना से वर्तमानमें बंधते हुए तीव्र कर्मोकी आलोयणा होती है और ये आश्रवमें संवर गुण उपजानेकी अद्‌भूत जडी बूटी है इसका मर्म विद्वान और ज्ञानी पुरुषही समझ सक्ते हैं

(१३) विवाहकी इच्छा करनेवाले और विवाहित स्त्री पुरुषोंकी भावना ऐसी है कि हजारो ग्रंथ बाचने, सुननेसे तथा हजारों डाक्टर हकीम, वैद्योंकी सलाहसे लाभ नहीं है वह लाभ इस भावनाको भावनेसे होता है और यह भावना शरीर सुधार जीवन सुधार, धर्मसुधार, और मनुष्य जन्मके सार्थक करनेके लिए अलौकिक वस्तु

है। इसको छ मास भावने पर अपनी आत्मामें अद्भुत शक्ति प्रकट होने से इसका अनुभव आपसे आप हो जायगा

(१४) विवाहकी इच्छाकरनेवाले और विवाहित स्त्री पुरुषों के लिए सुशिक्षा–शरीरकी आरोग्यता सबलता और भविष्यमें महा दु खोंसे बचकर शांतिमय, धर्ममय जीवन गुजारनेके निमित्त जडी बूटी और पारसमणिके समान है ।

(१५) गृहस्थाश्रमियोंकी भावना सोनेकी म्यान और रसकूपीके समान है

(१६) विधवा और विधुरकी भावना आर्त–रौद्र महा भयकर दुर्ध्यानोंको नाश करके सात्विक जीवन बनानेवाली है तथा कुकर्मो, बालहत्या और अनेक दुराचारों से छुडानेवाली है ।

(१७) व्यापारीकी भावना–अ याय अनीतिका मार्ग छुडाकर न्याय और नीतिके मार्गपर लानेवाली है

(१८) ब्रह्मचर्य प्राप्ति और रक्षाकी भावना ता खास ब्रह्म अर्थात् परमात्मा बनानेवाली है

(१९) नौवाडे किलेके समान है जिसे विषयवासना रूपी राक्षसी हानि नहीं पहुँचा सकती और ब्रह्मचर्य सुरक्षित रहता है

(२०) निरोगी होनेकी भावना–अनतकालका असाध्य रोग मिटाकर अविनाशी सुख देनेवाली है

समकरह ये भावनाएँ भाननसे और गुण प्रकट करनेसे तीर्थंकर पदकी पात्रता मिलती है । व्यवस्थापक,

घेलाभाइ भाणलाल शाह.

ओ मेनेजर–श्री जैन सस्तु साहित्य प्रचारक कार्यालय

कलोल (उ गु)

॥ ॐ सिद्धेभ्यो नमः ॥

आत्मजागृति भावना.

(हमेशा नित्यनियमसे वाचन मनन करनेकी भावना)

(१) आत्मकल्याण करनेका सरल उपाय
(भावनाका स्वरूप और फल)

(१) सकल शास्त्र पढनेका सार "आत्माके सत्य स्वरूपको समझकर उसे प्रगट करना" है यह "आत्मजागृतिकी भावनाएँ" आत्मस्वरूपको प्रगट करनेका उत्तम साधन है

(२) सर्व ज्ञानी पुरुषोंने मोक्ष अर्थात् छोटे तथा बडे सब तरहके दुःखोंसे छूटनेका उपाय एक ही बताया है और वह एक सत्यज्ञान व दूसरा सच्चारित्र है जितने प्रमाणमें ज्ञान तथा चारित्र पवित्र होता है, उतने प्रमाणमें दुःख दूर होते हैं "ज्ञान क्रियाभ्याम् मोक्ष" ज्ञान और क्रियासे मोक्ष अर्थात् दुःख रहित बन सकते हैं मेरा सत्य स्वरूप क्या है और मेरा कर्तव्य क्या है उसकी भावना करनेसे (वारवार विचारनेसे) सम्यग्ज्ञान और सच्चारित्र प्रगट होते हैं

(३) भावनाकी प्रबलतासे उत्कृष्ट आत्मोन्नति करनेका स्थान मनुष्य जन्म होनेसे सब जातिके जन्मोंमें मनुष्य जन्म

श्रेष्ठ माननेमें आया है कारण परम शुद्ध भावना अर्थात् परम शुक्र ध्यान द्वारा केवळ ज्ञान केवल दर्शन अनंत आत्मिक सुख मनुष्य भवमें ही प्रगट हो सकते हैं

(४) एक मनुष्य भवके पीछे असंख्यात नारकीके भव एक नारकीके भव पीछे असंख्य देवताके भव (तिर्यंच गतिमें से परवश वेदनासे हलके देव अनेकवार होनेसे) और एक एक देव भव पीछे अनंत तिर्यंचके भव करने पडते हैं ऐसा अमूल्य दुर्लभ मेरा मनुष्य भव जो ग्यानपानमें इन्द्रियोंके विषयसुखमें और प्रमादमें जावेगा तो पश्चातापका पार नहिं रहेगा इस लिए उत्तम भावनाएँ हमेशा चिन्तन कर सद्गुण प्रगट करके सचारित्र द्वारा जीवन सफल करना चाहिये

(५) शुद्ध भावनाकी बलवान भावना कार्यकी आधीसे ज्यादा सिद्धि है और पुरुषार्थ करनेसे पूर्ण सिद्धि मीलती है हरेक विजयका जन्म देनेवाली विजयकी माता दृढ भावना ही है

(६) जैसा बीज वैसा वृक्ष उत्पन्न होता है उसी प्रकार जैसे विचार वैसा चारित्र बनता है इस लिये अशुभ विचारोंको छोडकर सदा सुविचार ही करना चाहिये विचार (भावना) ही चारित्र घडते हैं

दोहा-शुद्ध भावसो तीर्थ है, उत्तम और अद्भुत।
स्नान करी उस तीर्थमें, त्यागु मेल अखूट ॥१॥
है नीच जो भावना, नीचा पद पमाय, ।

लोहेसे लोहज बने, कंचन कंचनसे थाय ॥२॥
परम आत्मकी भावना, शुद्ध भावसे थाय, ।
परमपदको लावती, कारण भाव जणाय ॥३॥
भावे धर्म आराधिये, भावे धरीये ध्यान ।
भावे भावो भावना, भावे केवळ ज्ञान ॥४॥
अशुद्ध भावसे नर है, शुद्ध भावसे मुक्ति ।
जो जाने गति भावकी, सो जाने यह युक्ति ॥५॥
जगमा मोटी भावना, भावो हृदय मोझार ।
भावथकी भव नीधि तर, पावे भवनो पार ॥६॥

(७) भावनाके अनुसार जीवन बनता है, ऐसा जानकर आजसे मैं हरहिम्मकी उत्तम भावना ही विचारुंगा, जो मनुष्य मैं दुःखी हूँ, रोगी हूँ, अशक्त हूँ, वृद्ध हो जाउँगा, सफलता नहीं मीलेगी इत्यादी हल्के विचार करता है वह वैसा ही बन जाता है और जो मनुष्य ऐसा विचारता है कि मैं सुखी हूँ, निरोगी हूँ, शक्तमान हूँ सदा युवान बना रहूँगा सब इष्ट कार्यमें सफलता ही पाउंगा इत्यादि उत्तम विचार करता है वह वैसे ही उत्तम फल पाता है अहिंसा, सत्य इमानदारी, परोपकारके, विचारोंसें वैसे गुण प्रगट (प्राप्त) होते हैं, इस लिये मैं सदा सद्गुणके ही विचार करूंगा कारण–

ज अब्भसेइ जीवो गुण च दोस च इत्थ जम्ममि ।
त पावेइ पुण्णभवे अब्भासेण पुणो तेण ॥ १ ॥

अर्थ–जो जो गुण अगर दोष इस जन्ममें धारण करते

है वैसेही गुणदोष प्राय पुनर्जन्ममें पूर्व अभ्याससे वे शिघ्र उत्पन्न हो जाते है इस लिये सद्गुणको ही मै धारण करूगा।

(८) कर्मोका बधन तथा नाश भावोके अनुसार ही हर समय होता रहता है सोते, जागते, चलते, बढते, हर समय कर्म बधन है (सस्कार पडते है) राग द्वेष मोह रहित निर्मल भावोंसे अनत अशुभ कर्म नाश होते है जब कि राग द्वेष मोहक विचारोसे अनत अशुभ कर्मोंका बध होता है

प्रसन्नचन्द्र राजऋषिजीने अशुभ भावनासे सातमी नर्क मे जावे उतने कर्मोका बध कीया और तत्काल शुद्ध भावना चिंतन की तो सब कर्मोंका नाश करके केवल ज्ञान प्रगट किया

तदुल मच्छ (चावल जीतना बडा शरीर है) अशुभ विचारोंसे दो घडीके छोटेसे आयुष्य मे सातमी नारकीमें चला जाता है यदि थोडी देरके खोटे विचार भी इतने दु ख-वर्धक है तो मै अनेकबार बुरे विचार करता हु मेरी क्या दशा होवगी ऐसा विचार करके जो अशुभ विचार आते है उन्हें धिक्कार देकर शुद्ध सुविचारमें दाखिल होना चाहिये

सुविचारही अनत सुखका कारन है और कुविचार ही अनत दु खोंसे भरपुर है

दोहा –महा दु'खका बीज हे, अशुभ रूप परिणाम
ताके उदय अनत दु ख भुगते आतमराम ॥१॥

(९) "सुख" यह जीवका मुख्य गुण है, स्वभाव है वह गुण अज्ञान तथा मोहसे मलिन होनेसे इस मेरे आत्माको

आत्मिक सुख भूलकर इंद्रियजन्य भोग (बाह्य पदार्थ) मे सुख दु:खका अनुभव होता है, शुभ भावासे बाह्य सुख और अशुभ भावासे बाह्य दु ख उत्पन्न होता है जब शुद्ध भाव अर्थात् राग द्वेप मोह रहित परिणाम (आत्मध्यान–आत्म रमणता) प्रगट होते है तब बाह्य सुख दु ख तथा उसके कारन पुण्य पाप प्रकृतिका नाश होकर यह आत्मा अनंत अव्याबाध आत्मिक सुख पाता है

रोग, शोक, चिंता, भय, जन्म. जरा, मरण, दु:ख मात्र अशुभ भावनाका फल है और इन सकल दुखोंसे छूटनेका उपाय एक उत्तम भावना है उत्तम भावनासे पूर्वके बंधे हुए अशुभ कर्म पलटाए जा सकते है उसका नाम शास्त्रमें "संक्रमण' अर्थात् कर्मोका परिवर्तन कहा है

शुभ भावनासे अशाता वेदनी शातारूप बनती है, पाप-प्रकृति पुण्यरूप होती है, अशुभ कर्मोकी लंबी स्थिति घट जाती है. तीव्र रस (अतिशय दु ख) मंद रस (अल्प दु ख) होता है बहुत कर्म पुंज अल्प हो जाते है. इसी प्रकार बुरी भावनासे शुभकर्म शातावेदनी पुण्य प्रकृतिका नाश भी होता है और पाप प्रकृति बढ जाती है ऐसी शिक्षा पाकर मै सदा उत्तम भावना विचारूंगा और उत्तम भावना किस तरह कहा विचारना ऐसी जागृति करानेवाली इस आत्मजागृति भावना को हमेशा नित्य नियमके वाचन मननम रक्खुगा

रोगीको यह भाव औषध है इस भावनासे द्रव्यमे रोग

शांति होवेगी तथा भावम अशुभ कर्मोंका नाश होवगा शारी रिक मानसिक, कौटुम्बिक व्यापारजन्य तथा जीवन निवा-हके इरक दुःखोंका नाश करनेका सरल उपाय यह पवीत्र भावना है, इन सब दु खोंका मूल कारण मेरी मलिन भावना है, इन सब दु खोंका नाश करनेका सरल उपाय यह पवीत्र भावना है, जिनको भाकर म सत्य सुख प्राप्त करूगा

(१०) वृक्ष भी दूसरकी भावनासे फलता है तथा सुकता है ऐसा विज्ञान शास्त्री श्रीजगदीशचद्र बोसने प्रत्यक्ष दिखाया है तो वनस्पति जीवोमे अनत गुण विशेष ज्ञानशक्ति जिसका प्रगट हुइ है एसी मेरी आत्मा अपने शुद्ध कोही उत्तम भावनास आत्म उन्नति कर यह यथार्थ है जिज्ञासु पाठक ' इन भावनाओंमसे १ श्री नवकार मत्र, २ समकितके चार गुण, ३ समकित प्रगट करनेकी छत्तीस भावनाए, ४ सद् गुण प्राप्ति तथा दुर्गुण नाशकी नहोत्तर भावनाएँ और अतके काव्य इतना तो अवश्यमव रोज एकाग्र चित्तस पढा कर और कुछ गुण चारित्र म धारन कर तथा अन्य भावनाएँ अपने जीवनका शिक्षादायी हाव न पढ

इन भावनामे जो उत्तमता है वह ज्ञानीओंकी प्रसादी ले कर करी है जिससे उनकी महा पुरूषोंका उपकार मानते है और जो भूल होव सा लेखककी अल्पज्ञता है इसलिय अज्ञान क्षय होकर मतिपूर्ण ज्ञान प्रगट होओ ऐसी भावना करते है

(२) श्री नवकार मन्त्र, अर्थ और भावना सहित

(१) नमो अरिहंताणः–श्री अरिहंत देवको नमस्कार करता हूँ "नमो" अर्थात् नमस्कार करता हू अरि अर्थात् शत्रु क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेप, मोह, अज्ञान, मिथ्यात्व, विषय, प्रमाद आदि अंतरंग शत्रुओंका सर्वथा "हंताण" अर्थात् नाश किया है ऐसे प्रभुको नमस्कार करता हू मैं भी क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेप, मोह, अज्ञान, मिथ्यात्व, विषय, प्रमाद आदि अंतरंग शत्रुओंका नाश करूंगा. वह दिन धन्य होउंगा संसारमें मुझ कोई दु ख नहीं दे सकता. सिर्फ मेरी आत्मा स्वय क्रोधादिद्वारा दु ख देनेवाला शत्रु बन जाता है, और क्रोधादि दोप त्यागनेसे आत्मा स्वय परम सुख देनेवाला मित्र बन जाता है। 'जब ऐसी भावना भाकर क्रोधादि भाव शत्रुओंका नाश करूंगा तब सब दु खोंसे छूट कर मैं परम सुखी बनूंगा ये क्रोधादि भाव-शत्रुओंका नाश होनेसे मैं भी अरिहंत हो सकूंगा. इस लिये अब मुझे शीघ्र इन क्रोधादि शत्रुओंके नाश करनेका प्रयत्न क्षमादि गुणद्वारा करना चाहिये।

(२) नमो सिद्धाण–श्री सिद्ध भगवानको नमस्कार करता हू जिन्होंने आत्माके सब आवरण दूर किये है, सब कर्म नाश किये है, और जिन्होंने अनंत गुण प्राप्त किये है ऐसे सिद्ध भगवानको नमस्कार करता हू।

आत्माके आठ गुणोंको ढाकनेवाले आठ कर्म है उन नाश करनेवाली भावनाएँ।

(१) ज्ञानावरणीय कर्म का नाश होकर अनंत ज्ञान गुण प्रगट हो

(२) दर्शनावरणीय कर्मका नाश हो और अनंत दर्शन गुण प्रगट हो

(३) मोहनीय कर्म नाश होकर अनंत आत्मिक सुख क्षायिक सम्यक्त्व और वीतराग चारित्र गुण प्रगट हो

(४) अंतराय कर्म क्षय हो और अनंत आत्मिक बल प्रगट हो

(५) वेदनीय कर्म नाश हो और अनंत अव्याबाध सुख प्रगट हो

(६) आयुष्य कर्मबंधन दूर होकर अजर, अमर, गुण प्रगट हो

(७) नाम कर्म दूर होकर अरूपी अवस्था मिले

(८) गोत्र कर्म नाश होकर अगुरु लघु गुण प्रगट हो

सब कर्म क्षय होकर आत्मिक अनंत गुण प्रगट हो।

(३) नमो आयरियाण - नमस्कार करता हू श्री आचार्य महाराजको जो पाच आचार स्वय पालते है तथा औरों से पलाते है ऐसे आचार्य महाराजश्रीको वन्दना नमस्कार करता हू। ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, तपाचार और वीर्याचार ये पाच आचारका जिस दिन मैं पालन करूगा वही दिन धन्य होगा

(४) नमो उवज्झायाण.–श्री उपाध्यायजी महाराजको वदना नमस्कार करता हू। जिस दिन मै भी ग्यारह अग बारह उपागका ज्ञाता बन सम्यक्त्व सहित उपाध्यायके गुण प्राप्त करूगा वह दिन धन्य होगा।

(५) नमो लोए सव्व साहूण–सर्व साधुजी महाराजको नमस्कार करता हू, हिंसा, विषय, कषाय मुझसे छूटे और अहिंसा, सयम, समभाव (अकषाय) गुण मुझे प्राप्त हों वही दिन मेरा सार्थक है.

पच पदके ये सब गुण मेरी आत्मामे भरे है ये सब गुण मुझमे प्रगटे।

(१) तत्वोका विशेष २ ज्ञान प्राप्त करु तथा अज्ञान और मिथ्यात्व त्याग सम्यग्‌ ज्ञान और सम्यक्त्व गुण धारण करके हिंसा, विषय, कषाय, क्रोधादि त्याग आत्माका हित कल्याण और श्रेय करनेके लिये साधुसयमी बनू
(२) साधुपदके गुण प्राप्त कर विशेष ज्ञान शक्ति और ध्यान द्वारा उपाध्याय बनू
(३) अतिशय ज्ञान प्राप्त कर श्रेष्ट चारित्र पालू आचार्य पद प्राप्त करू।
(४) उत्कृष्ट ज्ञान और सयमद्वारा राग द्वेष मोहका सर्वथा नाश कर अरिहत बनू
(५) अत समय सब कर्म क्षय कर सिद्ध पद प्राप्त करू

ये पाचो पदके गुण मेरी आत्मामें स्थित है उन्हें प्राप्त

करनेकी मैं इच्छा रखता हूं और पुरुषार्थसे इन पांचों प्रभुके तुल्य बन सक्ता हूं

(३) नमस्कारके प्रकार और फल

दोहा

बार बार प्रभु वंदना, शुद्ध भावे कराय।
कारण सत्ये साधनी, सिद्धि निश्चय थाय ॥१॥

भावार्थ–हमेशा वारम्वार जो भाव वंदना करते हैं अर्थात् प्रभुके समान गुण अपनी आत्मामें भरे हैं ऐसी भावना लाकर उन गुणोंको प्रगटाते हुए जो वंदना करते हैं व खुद प्रभु बन जाते हैं। जिन्हें निमित्त कारण सत्य मिल जाता है और जिनके भाव शुद्ध रहते हैं उनकी सिद्धि अवश्य होती है।

(१) द्रव्य नमस्कार–मनकी एकाग्रता किये विना जो वचनसे स्तुति और कायासे नमस्कार करता है उनका वचन और कायामें लगता हुआ पाप रुक जाता है और थोड़ा पुण्य होता है

(२) व्यवहार नमस्कारः–मन एकाग्र रख जो ज्ञान, चारित्रादि गुणोंकी स्तुति और नमस्कार करते हैं उन्हें अत्यंत निर्मल पुण्यकी प्राप्ति होती है और शुद्ध उपयोग (राग द्वेष, रहित परिणाम) होवे उनकी निर्जरा (कर्मोंका नाश) होती है।

(३) भाव नमस्कार–प्रभुके समान मेरी आत्मामें भी सब गुण मौजूद हैं उन्हें प्रगटानेके लिये प्रभुके समान ही

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप धर्म में आदरू ऐसी दृढ भावना रखनेवालोंको बहुत निर्जरा [कर्म नाश] होती है।

(४) निश्चय नमस्कार'-जो राग द्वेष रहित होकर स्वयं प्रभुके समान अपना स्वरूप समझ आत्मध्यानमें मग्न रहता है वह प्रभु बन जाता है, मोक्ष प्राप्त करता है।

दोहा

सावन मात्री जुदानको। मान एक बनाय॥
सो निश्चयनय शुद्ध है। सुनत करम कट जाय॥ १॥

नमन करना, नमस्कार करना अर्थात् हम जिन्हें नमस्कार करते है उनके समान बनते है इस लिये हमें सद्गुणी और पवित्रात्माओंको हमेशा नमस्कार करना चाहिये

---

(४) समकितको प्रगट करनेवाले चार गुणोंकी भावना

मोक्षका बीज सम्यक्त्व और सम्यक्त्वका मूल कारण चार भावनाएँ है इस लिये हमेशा उनका चिन्तवन कर चारों सद्गुण प्राप्त करना चाहिये ये गुण प्रकट होनेके पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्त होती है।

दोहा

गुणीजनोंको वंदना, अवगुण देख मध्यस्थ,
दुःखी देख करुणा करे मित्र भाव समस्त॥१॥

[१] प्रमोद भावना -हमेशा गुणानुरागी बनना। दूसरोंके

सद्गुण देख खुशी होना और विचार करना कि मुझमें भी ये गुण प्रकटें

(२) माध्यस्थ भावना -समभाव दूसरोंके दोष देख क्रोध, द्वेष करना नहीं परंतु उस दोषोंसे अपनी आत्मा बचे ऐसा उपाय करना। सुखमें खुशी और दुःखमें रंज न लाना हमेशा राग द्वेष रहित समभावमें रहना ऐसी शक्ति प्रकटे ऐसी भावना वारवार करना चाहिये

दोहा

" दुर्जन क्रूर कुमार्ग रता पर, क्षोभ नहीं मुझ को आवे,
साम्य भाव रहे सदा उनपर, ऐसी परिणिति हो जावे ॥ १ ॥

(३) करुणा भावना -शारीरिक और मानसिक दुःख दूर करना यह द्रव्य करुणा है और क्रोध, मान, माया, लोभ मिथ्यात्व छुडाना यह भाव करुणा है जिस दिन मैं अपनी और दूसरे आत्माकी भाव दया करूंगा वही दिन धन्य होगा पापों से स्वयं बचना और दूसरों को बचाना यही भाव करुणा है इस से अत्यंत लाभ होता है और सच्चा सुख मिलता है।

(४) मैत्री भावना -संसार के समस्त जीवों को अपने समान समझकर किसी भी जीव की हिंसा नहीं करना, सब का भला चाहना, यही स्व-पर द्रव्य मैत्री भावना है। और अपनी आत्माके सच्चे मित्र बनकर अपने अज्ञान मिथ्यात्व कषाय को त्याग सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रका आराधन

करना यह स्वभाव मैत्री भावना है. मुझे इन चारों भावनाओं के गुणोकी प्राप्ति हो।

चार भावना पर हरिगीत छंद

सौ प्राणी आ संसारना, सन्मित्र मुझ व्हाला थजो,
सद्गुणमा आनंद मानू, मित्र के वेरी हजो।
दुःखीया प्रति करुणा, और दुश्मन प्रति माध्यस्थता,
शुभ भावना प्रभु चार आ, पामो हृदयमा स्थिरता ॥१॥

भावार्थ –(१) मैत्री भावना –संसारके सब जीवोंको मै मेरे परम मित्र समझ सबका भला चाहताहू और उनके सब दुःख दूर हो एसी इच्छा करता हू।

(२) प्रमोद'–गुणानुराग भावना–मेरा भला करने वाला मित्र या दुःख देनेवाला शत्रु दोनो के गुण देखाता हूँ कारण मित्रने सद्गुण पुष्ट कीया हैं और शत्रुने दोष से बचनेकी तथा सत्य म न्ढ रहने की प्रेरणा की है।

(३) करूणाः–दुःखी के दुःख दूर करनेम सदा तत्पर रहना. सच्चा दुःख अज्ञान मिथ्यात्व, और कुचारित्रका समझ उनसे अपनी आत्माको दूर रखना और दूसरोकी आत्माको बचाना।

(४) माध्यस्थ'-समता भावना-सब जीव और सब अवसर पर समभाव रखना।

ये चार भावनाएँ सदा विचार इन गुणाको प्रगट करु यही मेरी इच्छा है।

जीव हमेशा भावना अर्थात् विचार तो करता ही है परंतु अशुभ भावना ज्यादा रहती है इस लिए भावनाका स्वरूप समझकर शुद्ध भावनाका चिन्तन करना चाहिये इन चार भावनाके हरेकके चार चार भेद है।

[१] मैत्रि भावना-[१] मोह मैत्रि-मित्र, पुत्र, धन, भोगादि कि बाह्य आनंदकि अपेक्षासे प्रीति [२] शुभ मैत्रि उपकारी सज्जन आदि प्रति प्रीति भक्ति तथा उत्तम कार्यमें ऐक्य [३] शुद्ध साधन मैत्री देव गुरु धर्म व ज्ञान दर्शन चारित्र प्रति भक्ति व मैत्रि [४] शुद्ध मैत्रि अनंत ज्ञानादि निज गुणोमे मैत्री-एकताका अनुभव। हे चेतन! तू ही तेरा मित्र है, क्यों अन्य मे ममत्व करता है। [आचाराग सूत्र]

[२] प्रमोद भावना-[१] मोहजन्य हर्ष-स्व-परको भोगोपभोगकी प्राप्ति मे आनंद [२] शुभ हर्ष-दान, पुण्य, सद्भाव, नैतिक गुण व सुविद्या स्व परको प्राप्त होने मे हर्ष [३] शुद्ध साधन हर्ष सम्यक् ज्ञान दर्शन चारित्रकी स्व-परको प्राप्तिमें आनंद (४) शुद्धानंद-आत्मिक सुख अविकारी अतींद्रिय निर्विकल्प निज सुखमें लीन होना

(३) करुणा भावना-[१] मोहजन्य करुणा-स्व परको भोगोपभोग धन वैभव, यशसा आदि प्राप्त न होने मे दुःखी होना [२] शुभ करुणा शारीरिक व मानसिक पीडासे दुःखित देखकर करुणा करना [३] शुद्ध साधन करुणा-अज्ञान,

मिथ्यात्व, विषय कषायसे स्व परको सदा अनंत दु:खी होता जान ये दोष त्याग सम्यग् ज्ञान दर्शन चारित्र विषय सयम व समभाव गुण प्रकट करना तथा प्रकट करवाना [४] शुद्ध करुणा–स्वस्वभाव [आत्म स्वरूप] में लीन रहना, ज्ञानादि निजगुणकी मलीनताही दु:ख हेतु जान आत्मगुणोंकी शुद्धि करना।

[४] माध्यस्थ भावना–[१] मोहजन्य समभाव–लज्जा, भय, लोभ, स्वार्थ या अज्ञानवश शांति धरना [२] शुभ समभाव–ऐक्य, सहनशीलता, गुणानुराग, गंभीरताके गुण तथा कलह, कुसंप, वैरभाव, विरोध के नुकसान विचारकर समभाव धरना [३] शुद्ध साधन समभाव–राग द्वेष करनेसे भाव हिंसा होती है। मैं शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, मन, वचन, काया, कषाय, कर्मरहित हूं। मैं अनंत ज्ञान, दर्शन, सुख, शक्ति स्वरूप हूँ। ऐसी भावना विचार कर समभाव धरना [४] शुद्ध समभाव परम समरसी भाव वीतराग भाव समभाव ही मेरा निज गुण है मैं क्या विकार पाऊँ क्या राग द्वेष लाऊँ ऐसा विचारके निज स्वरूपमें लीन होवे।

चारों भावनामें मोहजन्य पहिला भेद इस लोक तथा परलोकमें दु:खदायी है व पापबंध हेतु है। और दूसरा शुभ भेद इस लोक तथा परलोकमें बाह्य सुखदायी व पुण्य प्राप्ति का कारण है। तीसरा शुद्ध साधन नामा भेद इस लोक तथा परलोकमें बाह्य तथा आभ्यंतर दोनों सुखदाई व बहुत कर्म

क्षयका कारण है। और शुद्ध नामा चौथा भेद इस लोक तथा परलोकमें परम सुखदायी व मोक्ष प्राप्तिका प्रधान कारण है।

(५) समकित (आत्मदर्शन–सत्यश्रद्धा)

गुण प्रकट करनेवाली ३६ भावनाए

अपनी आत्मा अनादि काल से सम्यक्त्व भावना न लाने से अनंत जन्म मरण के दुःख भोग रही है जिस प्रकार सूर्योदय होते ही सब जगह से अंधकार नष्ट हो जाता है उसी प्रकार सम्यक्त्व गुण प्रकट होते ही सब प्रकारके दुःख और दोष नष्ट हो जाते हैं

ज्ञानी मनुष्य सादा भोजन [रोटी, दाल और कढी] मे ही सुख मानता है पर अज्ञानी या विलासी मनुष्य अनेक प्रकारके भोजन मिलने पर भी एक आध वस्तु न मिलनेमे क्रोध अरुचि और दुःख अनुभवता है इसीप्रकार सम्यक्त्वी जीव नरकमें भी अपने पुराने किये हुए कर्मोका नाश करता ही स्वयं शुद्ध होता है, शरीर पर मोह रखनेसे दुःख होता है, आत्मा अजर अमर ज्ञान स्वरूप है ऐसा सोचकर शांति प्राप्त करता है पर मिथ्यात्वी जीव बारहवें देवलोकका महान् देवता होने पर भी मिथ्यात्व और अज्ञान के कारण अन्य देवोंकी विशेष सम्पत्ति देख इर्षा द्वेष और तृष्णाके दुःखसे दुःखी रहता है, उपरोक्त उदाहरणोंका साराश यही है कि समकित अर्थात् सच्ची समझ यही सुखका मूल है

ऐसा जानकर यह भावना अवश्य चिंतन करनी चाहिये।

अनेक पूर्वाचार्य समकितकी भावनाका आराधन करने की शिक्षा देते हुए फरमाते है कि, हे भव्य ! तू छ महीने तक सब कामकाज कोलाहल छोडकर शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन कर, शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श इन पांच इन्द्रियोंके विषय, क्रोध, मान, माया, लोभ ये चार कषाय और आर्त, रौद्र ध्यान (संकल्प विकल्प) का त्याग कर। एकाग्र चित्तसे समकित भावनाका चिंतन कर। छ, महीने में तुझे अवश्य सम्यक्त्व गुण प्राप्त होगा, आत्मदर्शन अर्थात् शुद्ध निज आत्माका अनुभव प्राप्त होगा. यही सिद्धोंके सुखका अंश अनुभव है।

यह सम्यक्त्व गुण प्रकट हुए पश्चात् मोक्षकी प्राप्ति स्वयं सिद्ध है, ऐसी कल्याणकारी भावनाएँ शास्त्रकारों और पूर्वाचार्योंने भाव दया लाकर अनंत जन्म मरणके दुःख से बचानेके वास्ते भव्य जीवोंके लाभार्थ फरमाई है। वे अनेक स्थानोंसे यहां संग्रह कर लिखी गई हैं इनका पढना, मनन करना और चिन्तवन करना अपनाही परम हित साधनेमें अवश्य लाभ दायक है।

(१) सम्यक्त्व अर्थात् सच्ची समझ मुझे प्राप्त हो।

(२) मिथ्यात्व अर्थात् उल्टी समझका नाश हो।

(३) कुदेव, कुगुरु, और कुधर्मको सच्चे मानने रूप व्यवहार मिथ्यात्वका नाश हो।

(४) व्यवहार नयसे (१) देव, सर्वज्ञ वीतराग प्रभु (२) गुरु, तत्व के ज्ञाता, सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र के पालनेवाले मुनिराज. (३) धर्म, विवेक सहित अहिंसा तथा विषय कषायका त्याग इन व्यवहार देवगुरु और धर्मकी मदद से निश्चय देव, गुरु, और धर्म प्राप्त करू निश्चय तो मै शुद्ध सिद्ध रूप हू,ऐसा समझकर स्वानुभूतिरूपसम्यक्त्व निश्चय देव, मै शरीरादि सकल बाह्य पदार्थोंसे भिन्न हूँ, अनत ज्ञानादि गुण मुझ में भरे है, ऐसा ज्ञान यह निश्चय गुरु भोगादि सर्व पदार्थ अपने नहीं, ऐसा समझकर उनका त्याग, राग द्वेष मोह रहित मन आत्मध्यानमें लीन रहना, यह निश्चय चारित्र । इन गुणोंकी मुझे प्राप्ति हो । आत्माको जानना, यह निश्चय ज्ञान, आत्माकी श्रद्धा अनुभूति, यह निश्चय दर्शन, आत्माम रमण यह निश्चय चारित्र, इच्छा का त्याग, यह निश्चय तप, इन चारो गुणोंमें सदा निश्चलता, अक्षीणता सो निश्चय वीर्य । ये निश्चय पाच आचार मुझ प्राप्त होओ

( ) तत्त्वकी अरुचि, यह मिथ्यात्वका चिन्ह नाश होकर मुझ तत्व पर अतिशय रुचि, यह सम्यक्त्वका चिन्ह प्रकट होओ ।

(६) पर वस्तु मेरी नही है तो उसके नाशसे मै क्यों भय पाऊँ ? खेद देहको होता है, आत्मा अनत वीर्यमय है सो मै क्या खेदित बनू ? मेरी आत्मासे भय, द्वेष खेद नाश होओ ।

(७) शरीर और अन्य पदार्थोंको मैं अपने समझ हिंसा, विषय, कषाय (क्रोधादि) का सेवन करता हूं। ये दोष दूर हो ओ। ज्ञान, दर्शन, चारित्र स्वरूप, अशरीरी, अरूपी हूँ ऐसे शुद्ध आत्मस्वरूपका अनुभव, यही सम्यक्त्व गुण मुझे प्रकट होओ।

(८) आत्मासे भिन्न वस्तुओंको अपनी वस्तुएँ मानना, सो मिथ्यात्व नाश होओ अविकारी, शुद्ध ज्ञानस्वरूप आत्मा यही मेरा सत्य स्वरूप है, ऐसा दृढ श्रद्धारूप सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(९) अनादि कालसे मिथ्यात्व, मोह, भूल द्वारा भोग व इन्द्रिय सुखको अपने मानना, इस विपरीत बुद्धि अर्थात् मिथ्यात्व का नाश होओ। सर्वज्ञ वीतराग प्रभुकी स्व, पर प्रकाशक जिन वाणी सुनकर अतींद्रिय–आत्मिक सुखका अनुभवरूप समकित गुण प्रकट होवो

(१०) विषयोंकी इच्छा, यह कर्म रागकी खुजली है, विकार है। इसका नाश होओ। विषयेच्छा रहित आत्मिक सुख प्रकट होओ।

(११) पर वस्तुकी अभिलाषा, यह भी बडा भारी दुःख है। इसका नाश होओ। पर वस्तुकी इच्छाका त्याग, शांत रस, समभाव अवाच्छा रूप सत्य सुख प्रकट होओ।

(१२) कोई भी सयोग सुख दुःख नहीं देते। मैं ही मोह द्वारा, राग द्वेषकी प्रवृत्तिसे स्वय सुख दुःख उत्पन्न

करता हू यह मेरी ही भूल है । सत्य ज्ञान प्रकट होकर मोह मिथ्यात्वका नाश हो और सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ ।

(१३) अपनी आत्माके सिवाय सब पदार्थ दूसरे हैं । उनपर से मोह ममत्वका नाश होओ । आत्माके शुद्ध गुण प्रकट करनेकी रुचि उत्पन्न होओ ।

(१४) बाह्य पदार्थ, शरीर, धन, परिवार, वैभव, निंदा, प्रशसा सुख दु खमें आत्मलीनताका नाश होओ

दोहा

पुद्गलमें राचे सदा, जाने यही निधान ।
तस लाभे लोभी रहे, बहिरातम दुःख खान ॥१॥
बहिरातम ताको कहे, लखे न आत्म स्वरूप ।
मग्न रहे पर द्रव्यमें, मिथ्यावत अनूप ॥

भावार्थ –जो आत्मस्वरूपको नही पहचानते और इन्द्रियोंके सुखमें मग्न रहते है वे बहिरात्मा अर्थात् मिथ्यात्वी है । आत्मज्ञान, आत्मानुभव, और समभाव, ये अतरात्माके गुण मुझमें प्रगट होवो

दोहा

पुद्गल भाव रुचि नहिं, ताते रहत उदास ।
अतर आतम वह लहे, परमातम परकाश ॥१॥
अतर आतम जीवसो, सम्यक् दृष्टि होय ।
चौथे अरु फुनि बारवें, गुण थानक लो सोय ॥२॥

(१५) शरीर मोहसे शरीरधारी बन सदा जन्म मरण करने पडते हैं। इससे इस शरीर मोहका नाश होओ और परमात्मस्वरूप प्रकट होओ।

स्थिर सदा निज रूपमें, न्यारो पुद्गल खेल।
परमातम तब जाणिये, नहिं जगभवको मेल ॥१॥

भावार्थ–जो आत्मस्वरूपमें लीन हैं, पुद्गलको हमेशा भिन्न समझते हैं, जो सर्वज्ञ वीतराग हुए हैं और फिर ससारमें भव करने नहीं पडते ऐसा परमात्म स्वरूप मुझे प्रकट होओ।

(१६) मै एक हूँ, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ, अरूपी हूँ, अन्य द्रव्यसे ममत्व रहित हूँ, पुद्गलसे सर्वथा भिन्न हूँ, ज्ञान दर्शनसे एक स्वरूप हूँ, परिपूर्ण हूँ, आनद स्वरूप हूँ, इंद्रिय रहित, वाञ्छा रहित, आत्मिक सुखसे भरा हुआ हूँ ये गुण मेरे में शीघ्र प्रकट होओ।

(१७) इंद्रिय सुखमें आनद और दु'खमें खेद बुद्धि नष्ट होओ और सयम अर्थात् त्यागमें अरुचि रूप मिथ्यात्वका लक्षण दूर होओ।

(१८) विषयेच्छा दूर हो कर आत्मकल्याणकी इच्छा प्रकट होओ।

(१९) अनेक नय, अभिप्राय, अपेक्षा, समझनेकी समझ प्रकट होओ।

(२०) विषयके साधन शरीर, धन, स्त्री, पति, पुत्र, परिवार, मकान वस्त्र, गहने और वैभवमें ममता, यही मिथ्यात्व

दूर होओ और ज्ञानदर्शन चारित्रादि आत्माके गुणोंमें स्वामीपना सोही सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(२१) भोग, उपभोग और सासारिक कार्योंमे लीनतारूपी मिथ्यात्वका नाश होओ और ज्ञान दर्शन चारित्र तपमें रुचि नहो।

(२२) सासारिक कार्य और आठ कर्मका कर्ता मैं ही हूँ। यह मिथ्यात्व क्षय होओ ज्ञानदर्शन और चारित्रादि निज गुणोंका ही कर्ता मैं हूँ ऐसी समझ, सो समकित गुण प्रगट होओ।

(२३) इन्द्रियोंके सुख दु खका भोक्ता मैं हूँ, यह विकारी दूषित ज्ञान नाश करके जिस दिन म आत्मिक सुखका भोक्ता बनूँगा वह दिन सार्थक होगा

(२४) मिथ्यात्वीका सा य विषय सुख होता है जिससे शरीर धन, भोग प्राप्त कर वह राजी होता है समदृष्टिका साध्य आत्मिक सुख है जिससे ज्ञानदर्शन चारित्र तपकी प्राप्ति कर वह इसीमें आनद मानता है।

दोहा परम ज्ञान सो आत्म है, निर्मल दर्शन आत्म।
निश्चय चारित्र आत्म है, निश्चय तप भी आत्म॥

(२५) शब्दरूप, गध, रस, स्पर्श, पुद्गल है, जड है, अचेतन हैं, आत्मासे बिल्कुल भिन्न पदार्थ हैं। इनमें मेरापन मानना मिथ्यात्व है। इनपरसे सुख दु ख बुद्धि हटाकर

यह समझना कि अनंत ज्ञानादि गुण सम्पन्न मैंही शुद्ध आत्मा हूँ ऐसी सची समझरूप सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ।

(२६) द्रव्य कर्म (आठ कर्म जो आत्मा से लगे है), भावकर्म (राग द्वेष मोह) और नोकर्म [शरीरभोगादि] पुद्गल है, जड है, अचेतन हैं, आत्मासे बिल्कुल भिन्न पदार्थ है, इनमें अपना पन समझना मिथ्यात्व है। इनपर से सुखदुःख बुद्धि नाश होकर सर्व कर्म रहित अनंत ज्ञानादि गुण सम्पन्न बननेकी सची श्रद्धारूप समकित गुण प्रकट होओ।

(२७) कर्म व कर्मफल पुद्गल है, जड है, अचेतन है, आत्मासे भिन्न है। इनसे ममत्व और सुख दुख बुद्धि हर्ष, शोक, राग, द्वेष, नाश होओ और सर्व कर्म रहित मैं सिद्ध स्वरूप हूं, ऐसी भावना जागृत रहो।

(२८) मैं एक हूँ, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ अनंतज्ञानयुक्त हूँ अरूपी हूँ, अन्य सब पदार्थों से भिन्न हूँ, ज्ञान, दर्शन सुख और शक्ति से परिपूर्ण हूँ, नित्य हूँ, सत् (उत्पन्न ध्रुव और विनाश गुण सहित) हूँ, आनंद स्वरूप हूँ ये मेरे गुण है। ऐसी अनुभव सहित अंतर श्रद्धारूप भावना जागृत रहो।

(२९) एक सम्यक्त्व गुण ऐसा प्रबल है कि जो मिथ्या ज्ञान, मिथ्या चारित्र आदि अनंत दोषों को एक साथ दूर करता है। समकित हुआ कि सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र आदि गुण प्रगट होते हैं इसलिये शुद्ध सम्यक्त्व प्राप्त होओ.

(२०) समकितीका चिन्ह चोपाई–

सत्य प्रतीति अवस्थाजाकी, दिन दिन रीति गहे समताकी।
छिन छिनकरे सत्यको साको, समकित नाम कहावेताको ॥१॥

भावार्थः–जो आत्माका सच्चा स्वरूप निश्चय पूर्वक जाने समझे और हमेशा समताभाव बढाता रहे, प्रतिक्षण आत्माका अनुभव करे उसे सम्यक्त्वी कहते हैं, वही सम्यक्त्व गुण मुझे प्रकट होओ।

(२१) सम्यक्त्व के व्यवहारिक पाच लक्षण हैं, वे प्रकट होओ सम (समताभाव), सवेग (धर्म–धर्मी और धर्मका फल–मोक्ष से अतिशय प्रीति और भक्ति) निर्वेद, (विषय विकार से अरुचि, त्यागमें आनद) अनुकम्पा (द्रव्य भाव दु ख दूर करनेकी सदा चिंता) आस्ता (सत्यतत्त्वो परश्रद्धा) निश्चय (सम्यक्त्वका लक्षण)–शुद्ध आत्माका अनुभव स्वानुभूति स्वस्वरूपका आनद, इद्रिय रहित–आत्मिक सुख भोगना निराकुल, अविकारी शात रसमें स्थिरता पाना–ये गुण मुझे प्रकट होओ.

दोहा–आपा परिचय निज विषे, उपजे नहीं सदेह।
सहज प्रपच रहित दशा, समकित लक्षण एह ॥१॥

भावार्थ –आत्माका अनुभव आत्मा में ही करे। कभी अस्थिर न होवे। स्वाभाविक प्रपच (विषय–कषाय) रहित होवे। यही सम्यक्त्वका लक्षण है।

(३२) सम्यक्त्व के आठ गुण प्रकट होओ।

दोहा –करुणा, वत्सल, सुजनता, आतमनिंदा पाठ।
समता, भक्ति, विरागता, धर्मराग गुण आठ॥

भावार्थ–करुणा, मैत्री, गुणानुराग आत्मनिंदा (अपने दोष के लिये पश्चाताप) समभाव, तत्त्वश्रद्धा, उदासीनता (राग, द्वेष रहित रहना) और धर्म प्रेम, ये गुण प्रकट होओ।

(३३) समकित के पांच भूषण–

दोहा–चित्त प्रभावना भाव युत, हेय उपादेय वाणी,।
धीरज हर्ष प्रवीणता भूषण पंच बखाणी॥

भावार्थ –अपने और दूसरे के ज्ञान की वृद्धि करना (२) विवेक पूर्वक सत्य, प्रिय और हितकर बोलना (३) दुःखमें धैर्यरखना और सत्य न त्यागना (४) सदा संतोषी, आनन्दी रहना और (५) तत्व में प्रवीण बनना, ये गुण मुझमें प्रकट होओ।

(३४) समकित को मलीन करने वाले आठमद जाति, लाभ, कुल, रूप, तप, बल, विद्या और अधिकार मद क्षय होओ.

आठ मल दोष

चोपाई–

आशंका अथिरता वंछा, ममता दृष्टि दशा दुर्गंछा।
वत्सल रहित दोष पर भाखे, चित्त प्रभावना माहि न राखे॥

[१] सत्य तत्व में सशय [२] धर्म में अस्थिरता [३] विषयकी वान्छा [४] देह भोग आदि में ममत्व [५] प्रतिकूल प्रसग में घृणा, अरुचि [६] गुणानुरागी न होना [७] किसी के दोष कहना और (८) अपने और दूसरे के ज्ञान की वृद्धि न करना । देव गुरु और धर्म तथा शास्त्रकी परीक्षा न करना सो मूढता है। ये सब दोष समकित गुणको मलीन करने वाले है, इन्हें सदा त्यागूँ।

(३५) समकित के नाश करने वाले पाच कारण सदा छोड़ूँगा

दोहा --ज्ञान, गर्व, मति मदता, निष्ठुर वचन उद्गार ।
रुद्र भाव आलस्य दशा, नाश पच प्रकार ॥

(१) ज्ञानका घमड करना (२) तत्व जाननेमें मद रुचि और कम प्रयत्न (३) असत्य और निर्दय वचन बोलना (४) क्रोधी परिणाम (५) उत्तमज्ञान चारित्रादिमें आलस -य पाच समकितके नाश करनेवाले दोषोंसे सदा बचूँ समकितके पाच अतिचार

दोहा --लोक हास्य भय भोग रुचि, अग्र शाच थितिमव।
मिथ्या आगमकी भक्ति, मृषा दशनी सव ॥१॥

(१) मेरी साम्यकवादि प्रवृत्ति से लोग हँसेगे ऐसा भय रखना, यह शका (२) पाच इद्रिय के भोग की रुचि करना यह कखा (३) सद्गुण अथवा उत्तम तत्त्वकी अरुचि यह विति

गिच्छा (४–५) मिथ्या देव गुरु धर्मकी प्रशंसा करना अथवा सेवा करना, ये पाच दोष हमेशा छोडूं

(३६) पर वस्तुको अपनी समझ क्रोध, मान, माया (कपट), लोभ पैदा करना अनंतानुबंधी कषाय है जिससे अनंत संसार तथा अनंत दुःख मिलता है. मिथ्यात्व मोहनी (खोटेमे आनंद), मिश्र मोहनी (सत्य असत्य दोनो में आनंद), समकित मोहनी (सत्यमें कुछ मलीनता), ये सात प्रकृति नष्ट करनेसे समकित गुण प्रकट होता है। ये सातों प्रकृतिका मैं नाश करूं और हमेशा सम्यक्त्व गुण धारण कर अनंत, अभय, सुख, पाऊं।

दोहा:–प्रकृति सातों मोहकी, कहूं जिनागम जोय।
जिनका उदय निवारके, सम्यगदर्शन होय ॥१॥

(६) मिथ्यात्व नाश करनेकी भावनाएँ

मिथ्या अर्थात् झूठ, असत्य। मिथ्यात्व में " त्व " भाव वाचक संज्ञाका प्रत्यय है ज्यों मनुष्यत्व (मनुष्यपना) त्यों मिथ्यात्व अर्थात् असत्यपना, खोटी समझ. असत्य समझ, अयथार्थ समझ ही मिथ्यात्व है। मेरा जीव स्वयं कौन है? अपने खास शुद्ध गुण क्या हैं? कर्म संयोग से मन, वचन और काया तथा इंद्रियोंकी प्राप्ति हुई हैं। मिथ्यात्वके कारण

मन, वचन, काया से भिन्न अनंत ज्ञान सुख पूर्ण आत्म स्वरूपका निश्चय और अनुभव नहीं हो सक्ता इसलिये मिथ्यात्व नष्ट होओ और शुद्ध आत्माका अनुभव और निश्चय प्रकट होओ मिथ्यात्व के मुख्य पांच भेद हैं। वे अवश्य त्यागने चाहिये।

(१) अभिग्रहिक (ऐकान्तिक) मिथ्यात्वएकान्त पक्ष माने, ज्ञान और क्रिया व्यवहार (अहिंसा, सयम, तप), निश्चय (आत्मध्यान, स्वरूप लीनता) दोनों धर्म उचित स्थान पर न माने, स्याद्वाद अथात् अपेक्षा आशय नहीं समझे, समझ विना स्वीकार कर लेवे, कुल परम्परा से-देखादेखी श्रद्धा करे। नवतत्वका ज्ञान, नय, और प्रमाण द्वारा कर, यथार्थ तत्व निश्चय न करना सो अभिग्रहिक मिथ्यात्व नष्ट होओ और समझ सहित, सत्य अपेक्षा सहित नय, प्रमाण द्वारा यथार्थ तत्व श्रद्धा रूप सम्यक् दर्शन गुण प्रकट होओ।

(२) अनाभिग्रहिक -[वैनयिक] मिथ्यात्व-सबदेव एकसे समझे, सब गुरु, सब धर्म, और सब शास्त्र सच्चे माने, परीक्षा रहित ऐसी दशा क्षय होओ और द्वेष रहित समभाव से परीक्षा पूर्वक यथार्थ तत्व-निश्चय प्रकट होओ।

(३) अभिनिवेशिक (विपरीत) मिथ्यात्व-असत्यको सत्य माने, अति कदाग्रही, सत्य समझाते भी न समझे और अपने दोषको भी गुण समझे। मान, मोहके उदय से असत्य पक्ष न त्यागे, भूल मालूम होने पर भी "मैंने कहा वही सच्चा कहे पर सच्चा सो मेरा ऐसा न कहे'।

लोह बनियेकी तरह पकडी हुई टेक न छोडे. मैने आजतक इस प्रकार असत्य पकड रक्खा, अपनी भूल नहीं स्वीकारकी इसलिये मुझे धिकार है सब मिथ्यात्व में यह बडा मिथ्यात्व है जिसका मै ने सेवन किया। यह विपरीत मिथ्यात्व नाश हो और अब मेरी बुद्धि सार और सत्य ग्रहण करने में तत्पर रहो और यथार्थ तत्व श्रद्धा प्राप्त होवो।

(४) संशयिक मिथ्यात्व–सत्य में कुछ अस्थिरता और सूक्ष्म–गूढ विषय में संदेह प्राप्त होने के विचार नाश होओ निःसंदेह यथार्थ तत्व श्रद्धा प्रकट होओ. ये चार मिथ्यात्त्व, सज्ञी मनवाले विशेष बुद्धिशाली जीवको ही हो सकते हैं

(५) अज्ञान मिथ्यात्व–जीव अजीवादि नव तत्वके ज्ञान रहित धर्म क्या है ? आत्मा क्या है ? जो यह न समझे. केवल शरीर चिंता और इंद्रिय–सुख प्राप्त करने में और दुख हटाने म ही लीन रहे. इसमें मन रहित सब जीव और मन वाले धर्म रुचि रहित सब जीवोंका समावेश होता है. यह दशा जीवकी सबसे अधिक रहती है. इसमें रहकर अनत दुःख पाया, इस लिये मुझ धिकार है। अब तत्त्वका ज्ञान सीख सत्य श्रद्धावत बननेकी भावना प्रगट होओ.

आजतक मन वचन कायासे मिथ्यात्त्व में, खोटी समझ म श्रद्धा रखी, रखाई, और रखतेको भला समझा, इसलिये मुझे धिकार है और सत्यतत्त्व, निश्चय आत्मानुभव (स्वानुभूति) सम्यक्त्व गुण प्रकट होओ

(७) सद्गुण पाने और दुर्गुण नाश करनेकी ७२ भावनाएँ

(१) मै मेरे आत्माके सत्यस्वरूप का पहिचानूं यही मेरा परम कर्तव्य है मैं मेरे आत्म स्वरूपका सच्चा ज्ञान प्राप्त करूगा तभी धन्य होऊगा

(२) शरीर, कुटुम्ब, धन तथा बाह्य पदार्थोंको म अपने समझता हू इसलिये मुझ धिकार है. शरीर कुटुम्ब, धन तथा बाह्य पदार्थोंका जिस दिन मैं मोह छोडूगा वही दिन धन्य होगा ।

(३) शरीर, इंद्रिय सुख, परिवारके लिये मैं बहुत पाप करता हू , कराता हू , और करनेवालेको अच्छा समझता हू, इसलिये मुझ धिकार है सब पाप कर्म छोडकर जिसदिन आत्म कल्याण करनेवाला अहिंसा, सयम और तप, धर्मका पालन करूगा वहीदिन धन्य होगा

(४) अनेक छोटे या बडे जीवोंकी प्रमादवश हिंसा करता हू, इसलिये मुझ धिकार है मुझ में अहिंसा पालन करनेकी शक्ति प्रगट होओ

(५) झूठ बोलनेके कारण मैं धिकारका पात्र हूँ सत्य, प्रिय और हितकर बोलनेका मुझमें सामर्थ्य आवे

(६) विना साचे बोलता हू, इसलिये मुझ धिकार है

पूर्ण विचार किये बाद जरूरी, प्रिय और सत्य तथा थोडा बोलनेके गुण प्रकट होओ।

(७) बेइमानी करता हू, इस लिये मुझे धिकार है। शक्ति होते हुए दान न देना, सेवा नहीं करना, यह भी बेईमानी है, तथा त्रस, स्थावर जीवको मारना यह प्राण लूटनेकी बडी चोरी है। मैं इन दोषोंका छोड नीतिवान सदा रहूँगा

(८) विषय सेवन किया, इसलिये मुझे धिकार है। शुद्ध ब्रह्मचर्य गुण प्रकट होओ।

(९) तृष्णा करता हू, इसलिये मुझे धिकार है। संतोष गुण प्रकट होओ।

(१०) पति (स्त्री) परिवार धनादि में ममत्व रखता हू, इसलिये मुझे धिकार है। संसारकी सब वस्तुओं से ममत्वका नाश हो।

(११) क्रोध करता हू, इसलिये मैं धिकारका पात्र हू क्षमा गुण प्रकट होओ।

(१२) मान करता हू, इसलिये मुझे धिकार है। विनय गुण प्रकट होओ।

(१३) माया कपट करता हू, इसलिये मुझे धिकार है सरलता (निष्कपटता) प्राप्त होओ

(१४) लोभ करता हू, इसलिये धिकारने योग्य हू. उदारताका गुण प्रकट होओ।

पढ़ने और सुननेसे सामान्य बोध होता है । मनन करनेसे ज्ञान संशय रहित और दृढ होता है और वारवार मनन करनेसे तत्व पर विचार करनेसे, उसी विषयका चिंतन करनेसे, अर्थात् शुद्ध भावना और ध्यान द्वारा आतरिक आत्माके आवरणों (ढक्कन) का नाश होता है, मिथ्यात्वकी गाठका नाश होता है और आतमदर्शन अर्थात् शुद्ध समकित गुण प्रकट होता है । अर्थात् वारवार मनन करनेका फल मोक्ष है इस लिये इन भावनाओंका हमेशा नित्य नियममें चिंतन करना चाहिये.

(८) श्रावकके तीन मनोरथ

(१) आरभ (छ' कायाकी हिंसा) परिग्रह (धनादि) दुर्गति में ले जानेवाला कलहका घर, कर्म बधका करानेवाला दु खाका मूल, चारों गतिमें भटकानेवाला है। जिसदिन इसे मन, वचन और कायासे त्यागूगा वही दिन धन्य होगा।

(२) पच महाव्रत, पाच सुमति, तीन गुप्ति, क्षमा आदि दस मकारके यति धर्मको स्वीकार करूगा, समस्त कुटुम्ब, परिवार, धन, सम्पत्ति, त्याग शुद्ध सयम धारण करूगा वही दिन धन्य होगा

(३) मै अत (मृत्यु) समय मन, वचन और कायासे किये हुए कराये हुए और भले समझे हुए पापोंका पश्चात्ताप करूगा और मायश्चित लूगा चार आहार और अठारह पाप स्थानकके मत्याख्यान कर राग-द्वेप रहित बन समभावसे विचरूगा और सोचूगा कि शरीर और सब पदार्थों से मैं भिन्न हू, अजर हू, अमर हू, अविनाशी हू, अनत ज्ञान तथा आत्मिक सुख पूर्ण शुद्ध आत्मा हू, सिद्ध स्वरूप हू, ऐसा अतरआत्मानुभव करते करते पडित मरण माप्त करूगा वही दिन धन्य होगा.

(९) सदाचारी बननेकी बारह भावना

(१) अनित्य भावना –शरीर, धन, भोग-सामग्री, स्त्री (पति), पुत्र, माता-पिता परिवार, वैभव, निंदा स्तुति, घोडे, हाथी वस्त्र आदि सब वस्तुओंको मैं मेरी समझ रहा हूं और उनसे ममत्वकर, राग द्वेष व्याकर अनादि कालसे चारों गतिमें भटक रहा हूं। ये पचेंद्रिय के भोग अनित्य-नाशवान् और क्षणभंगुर हैं। उन्हें भोगने से अनंत कालतक नर्क, तिर्यंच गतिके भयंकर दुःख भोगने पडते हैं और नित्य आत्मिक सुख प्राप्त नहीं होता, ऐसा विचार कर इन भोगों का त्याग कर नित्य, अक्षय, अनंत, सुखदाई, ज्ञान, दर्शन, अहिंसा सत्य, ब्रह्मचर्य, सयम, तपमय धर्मका ग्रहण करनाही लाभ-दायी है, जिससे कि मुझे नित्य अनंत सुखकी प्राप्ति होगी अनित्य भावना भाने से श्री भरत चक्रवर्तीजीको केवल ज्ञान प्रकट हुआ मुझ भी केवल ज्ञान प्रगट होओ

दोहा –राजा, राना छत्रपति, हथियन के असवार।
मरना सबको एकदिन, अपनी अपनीबार ॥१॥

२ अशरण भावना –अज्ञान और मोहके वशीभूत हो यह आत्मा दुःखसे बचने के लिये धन, स्त्री, (पति), कुटुम्ब, हाट, हवेली इत्यादि बाह्य साधनों और सामग्रियोंको अपनी रक्षाका हेतु समझता है परन्तु सत्य और उसके स्वरूपका यथार्थ विचार करनेसे मालूम होता है कि ये भोग व साधन ही

जीवको अनत दु खदायक, अशरणदाता और नर्क तिर्यचके घोर दु'ख देनेवाले है और निरतर शरणभूत अनत आत्मिक सुखका कारणभूत धर्म में विघ्नकर्ता हैं, ऐसा खास विचार कर इन सब काम-भोगके साधनोंको छोड अहिंसा, ब्रह्मचर्य, सत्य, सयम, तप, आत्मज्ञान, आत्मध्यान ग्रहण करना खास जरूरी है, यह भावना अनाथि मुनिके दिलमें आई और उन्होंने मोक्ष-पद प्राप्त किया, इसी प्रकार मुझे भी अशरण भावना प्राप्त होओ।

दोहाः-धन जन देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती वेला जीवको, कोई न राखन हार॥

इस प्रकार शरीर, धन, भोग, परिवार, निंदा, स्तुति इत्यादि सब साधन जीवको अशरणदाता हैं और मै अनादि कालसे इन्हे शरणदाता समझता था मैंने इन्हें ज्यों ज्यों शरणदाता समझा त्यों त्यों मुझे अनत दु.ख उठाना पडा इन वस्तुओंसे मैंने दु ख दूर करनेकी कोशिशकी, पर दु ख दूर न हो सका और जब सत्य स्वरूपका विचार किया तो मालूम हुवा कि ये सब साधन एव सामग्री जीवको तीनो काल में भी दु ख से नही बचा सकीं, परतु अनत दु ख बढाने-वाली हैं। इसलिये अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, सयम, तप, जो अनत सुखदायक है उन्हे ग्रहण करना चाहिये।

(३) ससार भावना -अनादि कालसे मै जन्म, जरा, मृत्युरूपी ससारमें परिभ्रमण कर रहा हू। इसका मूल ।१

संसारके पदार्थ, शरीर, पाच इंद्रियके भोग, अज्ञान, मोह, और रागद्वेष है। जब मैं इन सबको छोडूंगा तब ही संसार के परिभ्रमणसे मुक्त होऊंगा और अनंत अव्याबाध, आत्मिक (इंद्रिय रहित) सुख-पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर सकूंगा। मेरी आत्माने इस संसारमें परिभ्रमण करते हुए सब प्रकारके भोजन (मेवा मिष्टान्नादि) खाये तथा सब स्थान, राज्य महल, देवलोक आदि, सब सुखके संयोग, पाच इन्द्रियोंके सुख जिन्हें मैं अज्ञानतासे सुख मानने आया हू और उनके बदले अनंत दुःखके सागर नर्क, तिर्यंच आदिमें अनंत वक्त दुःख देखे परंतु यह जीव संतुष्ट नहीं हुवा। जिस प्रकार अग्नि, लकडीसे कभी शांत नहीं होती परंतु विशेष बढती है उसी प्रकार यह जीव संसारके विषय भोगोंसे कभी भी शांत नही हुआ और उसने अनंत दुःख ज्यादा पाया। जिस प्रकार अग्निको शांत करनेका उपाय पानी है उसी प्रकार इस जीवको संसारसे मुक्त करनेका उपाय अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, संयम, क्षमा, निलोभता, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, ध्यानादि है। इस पानीसे जीवकी विषयरूपी अग्नि हमेशाके लिये शांत हो जाती है। और अनंत सुख (मोक्ष) की प्राप्ति होती है ऐसा विचार कर इस सब संसारसे सम्बंध त्यागना श्रेयस्कर है। श्री धन्ना शालीभद्रजीने संसार भावनाका चिन्तवन कर आत्मकल्याण किया वैसा मुझ भी प्राप्त होओ।

दोहाः-धन बिना निर्धन दुखी, तृष्णावत धनवान ।
कोउन सुखी ससारमें, सब जग देखा छान ॥
होय न तृप्ति भोगसे, यह अनादिकी रीत।
जो सयम गुण प्रकट करे, रहे सकल दु ख जीत ॥२
परद्रव्य म प्रीति है, यही ससार अबोध ।
याको फल गति चारमे, भ्रमण कयो सूत्र शोध ॥३

भावार्थ-परवस्तुमें प्रीति रखनेही से ससार (जन्म-मरण और मिथ्यात्व बढता है जिसके कारण चारो गतिमें परिभ्रमण करना पडता है, श्री आचार्य महाराजने सब सूत्रों का यह सार है, ऐसा फरमाया है ।

(४) एकत्व भावना

दोहाः-आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय ।
कबहू अपने जीवको, साथी सगो न कोई ॥१॥

यह भावना लाते हुए ऐसा सोचे कि मे एक हूँ, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ, अनत ज्ञानमय हूँ, अरूपी हूँ, अन्य द्रव्योंसे निर्ममत्वी हूँ, सर्वथा भिन्न हूँ, ज्ञानदर्शन सहित हूँ, प्रतिपूर्ण हूँ, एक स्वरूप हूँ, नित्य हूँ सत् स्वरूप हूँ, आनद स्वरूप हूँ, इद्रिय रहित हूँ निराकुल (इच्छारहित) हूँ, अनत आत्मिक सुखसे भरपूर हूँ, मै अकेला जन्मा हूँ और जब मेरी मृत्यु होगी तब भी अकेला ही जानेवाला हूँ । इस जगत म कोई वस्तु मेरी नहीं। अज्ञान और मिथ्यात्वसे जीवको कर्म अनादि कालसे लगे है, इस लिये शरीर प्राप्त कर अनत कालमे सुख

ससारके पदार्थ, शरीर, पाच इन्द्रियके भोग, अज्ञान, मोह और रागद्वेष है । जब मैं इन सबको छोडूगा तब ही ससार के परिभ्रमणसे मुक्त होउगा और अनत अव्याबाध, अमिश्र (इंद्रिय रहित) सुख-पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर सकूगा । मेरी आत्माने इस ससारमें परिभ्रमण करते हुए सब प्रकारके भोजन (मेवा मिष्टान्नादि) खाये तथा सब स्थान राज्य महल, देवलोक आदि, सब सुखके सयोग, पाच इन्द्रियोंके सुख जिन्हें मैं अज्ञानतामें सुख मानते आया हू और उनके बदले अनत दु खके सागर नर्क, तिर्यंच आदिमें अनत बक्त दु ख देखे परतु यह जीव सतुष्ट नहीं हुवा । जिस प्रकार अग्नि, लकडीसे कभी शात नहीं होती परतु विशेष बढती है उसी प्रकार यह जीव ससारके विषय भोगोंसे कभी भी शात नही हुआ और उसने अनत दु ख ज्यादा पाया । जिस प्रकार अग्निको शात करनेका उपाय पानी है उसी प्रकार इस जीवको ससारसे मुक्त करनेका उपाय अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, सयम, क्षमा, निर्लोभता, ज्ञान, दर्शन चारित्र, ध्यानादि है । इस पानीसे जीवकी विषयरूपी अग्नि हमेशाके लिये शात हो जाती है । और अनत सुख (मोक्ष) की प्राप्ति होती है ऐसा विचार कर इस सब ससारसे सम्बध त्यागना श्रेयस्कर है । श्री धन्ना शालीभद्रजीने ससार भावनाका चिन्तवन कर आत्मकल्याण किया वैसा मुझे भी प्राप्त होओ ।

दोहा-धन विना निर्धन दुखी, तृष्णावत धनवान ।
कोउन सुखी ससारमें, सब जग देखा छान ॥
होय न तृप्ति भोगसे, यह अनादिकी रीत।
जो सयम गुण प्रकट करे, रहे सकल दु ख जीत ॥२
परद्रव्य म प्रीति है, यही ससार अबोध ।
याको फल गति चारमे, भ्रमण कह्यो सूत्र शोध ॥३

भावार्थ-परवस्तुमे प्रीति रखनेही से ससार (जन्म-मरण और मिथ्यात्व वढता है जिसके कारण चारों गतिमें परिभ्रमण करना पडता है, श्री आचार्य महाराजने सब सूत्रों का यह सार है, ऐसा फरमाया है ।

(४) एकत्व भावना.

दोहाः-आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय ।
कबहू अपने जीवको, साथी सगो न कोई ॥१॥

यह भावना लाते हुए ऐसा सोचे कि मै एक हूँ, शुद्ध हूँ, बुद्ध हूँ, अनत ज्ञानमय हूँ, अरूपी हूँ, अन्य द्रव्योंसे निर्ममत्वी हूँ, सर्वथा भिन्न हूँ, ज्ञानदर्शन सहित हूँ, प्रतिपूर्ण हूँ, एक स्वरूप हूँ, नित्य हूँ सत् स्वरूप हूँ, आनद स्वरूप हूँ, इन्द्रिय रहित हूँ निराकुल (इच्छारहित) हूँ, अनत आत्मिक सुखसे भरपूर हूँ, मै अकेला जन्मा हूँ और जब मेरी मृत्यु होगी तब भी अकेला ही जानेवाला हूँ । इस जगत में कोई वस्तु मेरी नहीं। अज्ञान और मिथ्यात्वसे जीवको कर्म अनादि कालसे लगे है, इस लिये शरीर प्राप्त कर अनत कालसे सुख

दु:ख भुगत रहा हूँ। जब अज्ञान और मिथ्यात्वका सर्वथा नाश करूगा तब कर्म रहित अशरीरी, शुद्ध बुद्ध परमात्मा-स्वरूप हो जाऊगा ऐसी एकत्व भावना श्री नमी राज ऋषि-जीने चिंतन की और अपना आत्म-कल्याण किया, वैसी मुझे भी चितन करना चाहिये

(५) अन्यत्व भावना अर्थात् भेद भावना

दोहा –जहा देह अपनी नहीं, तहा न अपना कोय।
पर सम्पत पर प्रकट है, पर है पर जन लोय ॥१॥

भावार्थ –जब शरीर भी अपना नही उसे भी त्यागकर चला जाना पडता है तब दूसरा अपना कोन है? घर सम्पत्ति, और परिवारभी अपनसे भिन्न हैं, यह साफ प्रकट है ता भी अज्ञानसे मै आज तक इन्हें अपने समझ दु:ख उठाते आया हूँ अब भेद-भावना लाकर सब दु:ख रहित बनुगा।

दोहा –भेद ज्ञान सा मुगति है, जुगति करो किम कोय।
वस्तु भेद जाणे नहीं, मुगति कहासे होय ॥१॥

इस प्रकार विचार कर कि यह शरीर और जितने बाह्य पदार्थ दृष्टिगत होते हैं वे सब जड और चेतन्य द्रव्य मेरी आत्मासे भिन्न (पृथक) है, मैं इनसे भिन्न हूँ। मेरी आत्मा अनत ज्ञान, अनत दर्शन, अनत आत्मिक सुख, अनत, वीर्य, ये चार गुणवाली है। मैं अज्ञान और मोहसे अन्य वस्तुका अपनी समझ राग द्वेष कर अनत कालसे दु:ख पा-रहा हूँ मुझे तीनों कालोंमें (वतमान, भूत भविष्यमे) अपनी

आत्मा और इसके शुद्ध गुणोंके सिवाय अन्य कोई वस्तु सुख नहो दे सकतो पुत्र, स्त्री (पति), माता, पिता आदि चैतन्य तथा धन-धान्य, वैभव आदि जड पदार्थ जो दृष्टिगत होते है वे सब पदार्थ त्यागना ही मेरे लिये लाभदायक है। जिस दिन में इन सब पदार्थोंको त्यागूगा वही दिन मेरा परम कल्याणकारी होगा. श्री मृगापुत्रजीने यही भेदभावना भाई और आत्म-कल्याण किया वैसी मुझे भी प्राप्त होओ।

दोहा -भेद ज्ञान साबू करी, समरस निर्मल नीर।
धोबी अतर आतमा, धोवे निज गुण चीर ॥३॥

(६) अशुची भावना-इस प्रकार विचार करे कि यह मेरा शरीर हाड, मास, रुधिर, मल, मूत्र श्लेष्म, खूखार, मेद, पित्त, कफ, वायु, कीडे तथा नसाजाल आदि से भरपूर भरा हुवा है। इस शरीर म काईभी वस्तु रमणीक, सुगधीवाली मनोहर दृष्टि-गत नहीं होती। और यह शरीर केसर, कस्तुरी, चदन, कुकु आदि सुदर पदार्थोंको भी बिगाड देता है अर्थात् मलमूत्ररूप बना देता है, इतना होते भो इस शरीरको सुख और स्नेहका भाजन मानना बडीही अज्ञानता है, ऐसा समझ इस शरीर पर मोह नहिं करूगा। इस शरीरकी उत्तमता केवल धर्म पालन से ही बताई गई है, इसलिये ज्ञान, दर्शन, चारित्रकी आराधना करने में समय मात्रका भी प्रमाद करना ठीक नहीं है कारण कि:—

दीपे चाम चादर मढी, हाड पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह ॥

भावार्थ –हाड के पिंजरेवाली यह काया चमडी रूपी चादर से मढी होनेसे शोभा पाती है परन्तु इसके अंदर जो वस्तुएँ भरी है उनपर विचार करते यह बात होता है कि इस शरीर जैसा दूसरा दुर्गंधीवाली स्थान ससार में और कोइ नहीं है, कारण पखाने-में गिरा हुवा पदार्थ तो थोडीसी गंधके हेर फर से पीछा स्वच्छ हो जाताहै पर इस शरीर मे पडे हुए बादाम, घी, शकर कस्तूरी आदि पदार्थ तो मल बनकर ही पीछे निकलते हैं।

दोहा –शरीर विष्टा कोथली, तेमा शु मोहाय।
ममता तजी समता धरे ते जीव मुगति पाय ॥

ऐसा विचार कर ज्ञानी पुरुष ऐसे मलीन अपने तथा अन्यके शरीर पर मोह नहीं करते कारण कि इसपर मोह करना जीवका महा दुःखदाई है ऐसे दुर्गंधी
पर मोहकर जीव एक काम भोग म अ
बात है अनत दु
इसलिये धारिय।
विन। और
ममता

राग हटाकर दान, शील, तप, भाव, ज्ञान, दर्शन, चारित्र गुण धारणकर इसे सफल करना चाहिये।

७ आश्रव भावनाः-यह जीव आश्रव और उसके सम्बन्धी कारणों से चार गतिके अंदर परिभ्रमण कर रहा है, मन, वचन, काया ये तीन योग और क्रोध, मान, माया लोभ ये चार कषाय द्वारा कर्मोका आश्रव होता है इसलिये मुझे मन, वचन, और कायाको ध्यान में स्थिर रखना हितकर है। और कषायको सब तरह त्यागनाही लाभकारी है।

दोहा-संज्ञा, लेश्या, आदित्रय, इंद्रिय वशता होय।
आर्त, रुद्र, कुध्यानता, मोह, पाप, पद सोय ॥१॥

भावार्थ-चार संज्ञा, तीन प्रथमकी लेश्या (कृष्ण, नील कापोत) पांच इंद्रियोंके वश होजाना, आर्त, रुद्र ध्यान ध्याना और राग, द्वेष, मोह ये आश्रव के कारण हैं।

दोहा-कर्म ग्रहण करे जोग करी, जोग वचन मन काय।
भाव, हेतु, स्थिति बंध है, रागादि उपजाय ॥

मन, वचन, कायासे प्रकृति और प्रदेश बंध होते हैं और रागद्वेषसे स्थिति तथा रसबंध होते हैं.

मन, वचन, और काया रूपी योगसे कर्म दल रूपी द्रव्याश्रव होता है और क्रोधादि कषाय यह भावाश्रव है। शुभ योगसे शुभाश्रव और अशुभ योगसे अशुभाश्रव होता है, इसलिये मुझे द्रव्याश्रव और भावाश्रव दोनों त्यागना श्रेयस्कर हैं ये मेरे अनंत आत्मिक सुखके घातक हैं।

दीपे चाम चादर मढ़ी, हाड पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत में, और नहीं घिन गेह ॥

भावार्थ –हाड के पिंजरेवाली यह काया चमड़ी रूपी चादर से मढ़ी होनेसे शोभा पाती है परंतु इसमें अंदर जो वस्तुएँ भरी हैं उनपर विचार करते यह ज्ञात होता है कि इस शरीर जैसा दूसरा दुर्गंधीवाली स्थान-ससार में और कोई नहीं है, कारण पखाने-में गिरा हुवा पदार्थ तो थोडीसी गधके हेर फेर से पीछा स्वच्छ हो जाताहै पर इस शरीर में पडे हुए बादाम, घी, शक्कर, कस्तूरी आदि पदार्थ तो मल बनकर ही पीछे निकलते है।

दोहा –शरीर विष्टा कोथली, तेमा शु मोहाय।
ममता तजी समता धरे ते जीव सुगति पाय ॥

ऐसा विचार कर ज्ञानी पुरुष ऐसे मलीन अपने तथा अन्यके शरीर पर मोह नहीं करते कारण कि इसपर मोह करना जीवका महा दुःखदाई है ऐसे दुर्गंधी रूपवाले शरीर पर मोहकर जीव एक वक्तके काम भोग में असख्य जीवोंकी घात करडालता है और फिर आप अनत दुःख पाता है। इसलिये मुझे इसपर मोह नहीं करना चाहिये। यह अशुचि भावना सनत्-कुमार चक्रवर्तीने चिन्त्वनकी और शरीर परसे ममता हटा आत्म-कल्याण किया इस प्रकार मुझे भी इस क्षणभगुर, दुर्गंधीवाले शरीर परसे खोटी ममता, स्नेह, विषय,

राग हटाकर दान, शील, तप, भाव, ज्ञान, दर्शन, चारित्र गुण धारणकर इसे सफल करना चाहिये ।

७ आश्रव भावना'--यह जीव आश्रव और उसके सम्बन्धी कारणों से चार गतिके अदर परिभ्रमण कर रहा है, मन, वचन, काया ये तीन योग और क्रोध, मान, माया लोभ ये चार कषाय द्वारा कर्मोंका आश्रव होता है इसलिये मुझे मन, वचन, और कायाको ध्यान में स्थिर रखना हितकर है। और कषायको सब तरह त्यागनाही लाभकारी है।

दोहाः--सज्ञा, लेश्या, आदित्रय, इद्रिय वशता होय।
आर्त, रुद्र, कुध्यानता, मोह, पाप, पद सोय ॥१॥

भावार्थ.--चार सज्ञा, तीन प्रथमकी लेश्या (कृष्ण, नील कापोत) पाच इद्रियोंके वश होजाना, आर्त, रुद्र ध्यान ध्याना और राग, द्वेष, मोह ये आश्रव के कारण है।

दोहा --कर्म ग्रहण करे जोग करी, जोग वचन मन काय।
भाव, हेतु, स्थिति बध है, रागादि उपजाय ॥

मन, वचन, कायासे प्रकृति और प्रदेश बध होते है और रागद्वेषसे स्थिति तथा रसबध होते है

मन, वचन, और काया रूपी योगसे कर्म दल रूपी द्रव्याश्रव होता है और क्रोधादि कषाय यह भावाश्रव है। शुभ योगसे शुभाश्रव और अशुभ योगसे अशुभाश्रव होता है, इसलिये मुझे द्रव्याश्रव और भावाश्रव दोनों त्यागना श्रेयस्कर है ये मेरे अनत आत्मिक सुखके घातक है।

दोहा—राग, द्वेष अरु अज्ञता, भाव आश्रव भवी जाण ।
अष्ट कर्म दल आगमन, द्रव्य आश्रव प्रमाण ॥ १॥

यह भावना समुद्रपाल मुनिने ध्याई और आत्मकल्याण किया, उसी प्रकार मैं भी आश्रवका त्याग संवरको धारण कर आत्मकल्याण करूंगा वह दिन धन्य होगा ।

८ संवर भावना.—यह जीव संवर धारण करनेसे चतुर्गतिके क्लेश दुःखसे छुटता है और अनंत सुख प्राप्त करता है यह संवर मन, वचन और काया के योगको रोकनेसे प्राप्त होता है । मनको धर्म ध्यानमें लगाना, वचनसे सत्य, मधुर, प्रिय सबको हितकारी और निर्वद्य (पापरहित) भाषा बोलना, कायाको अहिंसामय धर्ममें लगाना और चार कषायको रोकना, यह संवर है ।

दोहा—निज स्वरूप में लीनता, निश्चय संवर जाण ।
सुमति गुप्ति संयम धर्म, करे पापकी हाण ॥

भावार्थ—पांच सुमति, तीन गुप्ति, और दस प्रकारके क्षमादि यति धर्म, ये सब संवरको प्रकट करनेवाले हैं आत्म स्वरूपमें लीनता, रमणता, यह निश्चयसंवर है जिस दिन मैं योग प्रवृत्ति तथा कषायका त्याग कर आत्म-स्वरूप में लीन हो संवर भावना आराधुंगा वह दिन धन्य होगा यह भावना केशी महाराज और गौतम स्वामीने चिन्तवन की और आत्मकल्याण किया । उसी मुजब मुझे भी द्रव्य और भाव संवर प्राप्त होओ ।

९ निर्जरा भावनाः— दोहा –

सवर योग विमल सहित, विविध तपो विधि धार ।
बहुत कर्म निर्जर करण, सो मुनि त्रिभुवन सार ॥

१ अनशनः–आहार त्याग, थोडे समयके लिये या जीवन पर्यंत.

२ उणोदरी–खाने पीने तथा काममें आनेवाली वस्तुएं घटाना यह द्रव्य उणोदरी और विषय कषाय घटाना, यह भाव उणोदरी.

३ वृतिसक्षेप–इच्छाए रोकना, अभिग्रह करना

४ रस परित्यागः–दूध, मिठाई, मसाला, शाक, मसालेवाले आचार आदि पौष्टिक या स्वादिष्ट पदार्थ त्यागना ।

५ कायक्लेशः–सब काम हाथसे करना, सवा करना, पाव २ चलना, आतापना लेना, आसन करना आदि·–

६ प्रतिसलीनता·–इद्रिय–सयम, पाचो इन्द्रियों पर कब्जा रखना

७ प्रायश्चितः–पापकी शुद्धि, पश्चात्ताप और प्रकट में माफी मागना तथा उचित दड आत्मशुद्धिके लिये हर्षपूर्वक स्वीकार करना

८ विनयः–जिसके पाच भेद है—

(१) अपूर्वज्ञान हमेशा सीखना, यह ज्ञानविनय

(२) व्यवहार, निश्चय, नयसे प्रत्येक विषयका समझ उसपर श्रद्धा लाना तथा आत्माका अनुभव करना, यह दर्शन (समकित) विनय।

(३) हिंसा, विषय, कषायका त्याग करके मन. वचन और कायाको रोकना, यह चारित्र-विनय.

(४) इच्छाए रोकना यह तप विनय।

(५) गुरु, बडेरे, गुणी पुरुष आदिकी विनय, भक्ति करना यह लोकोपचार-विनय (व्यवहार-विनय)

९ वैयावच्च -सेवा, भक्ति करना और ज्ञान, दर्शन, चारित्र में स्थिर करना.

१० सज्झाय -उपयोग सहित पढना (वाचन), पूछना, याद करना (परियट्टणा) और विशेष उपयोग लगाना (अणुपेहा) तथा धर्मोपदेश देना (धर्म कथा) स्व कहेतो आत्मा और याय अर्थात् चिंत्वन जो आत्मचिन्त्वनमें सहायक है सो सज्झाय है

११ ध्यान -एकाग्र चित्तसे उत्तम विषयका चिन्त्वन करना।

१२ काउसग्गः-वचन और कायाकी प्रवृत्तिको त्यागना, मनको धर्म ध्यानमें लीन करना

प्रथम कहे हुए छः तप बाह्य-तप है । वे प्रत्यक्ष दृष्टिगत होते है और दूसरे छः तप अभ्यतर तप है । बाह्य-तप अभ्यतर तपको प्रकट करने तथा दृढ करनेमें लाभदायक है ।

इस प्रकार बारह तप सवर भावपूर्वक आराधन करें तो बहुत से कर्मोंकी निर्जरा होती है । मुझे सवर के साथ बारह प्रकारके तप करनेकी इच्छा प्राप्त होओ ।

यह भावना अर्जुनमाली मुनिने भाई और आत्म-कल्याण किया तथा थोडे ही समय में बहुत से कर्मों के समूहको क्षय कर मोक्ष प्राप्त किया ।

दोहाः-पच महाव्रत पालके, सुमति पच प्रकार ।
पाचों इद्रि विजय कर, धार निर्जरा सार ॥

१० लोक भावना'-मैंने सब लोक में, सबजगह सब अवस्था में सब सुख और दु'खकी दशा अनत समय भोगी है कोई स्थान ऐसा बाकी नहीं रहा कि जहा मैंने अनतवार जन्म मरण न किये हों सब पदार्थ अनतवार भक्षण किये । परतु जीवको तृप्ति, सतोष नहीं हुवा इसलिये अब इस लोकके सब पदार्थों परसे ममत्व हटा अनत-ज्ञानादि गुण धारणकर जब हिंसा विषय, कषायका त्याग करूगा तब

अनत सुख, पूर्व मोक्ष माप्त हो सकेगी यह भावना शिवराज ऋषीश्वरने भाई और मोक्ष माप्त किया, उसी प्रकार मुझ भी लोकभावना प्रकट होओ।

दोहा -लोक स्वरूप विचार के, अपना स्वरूप निहार।
परमारथ व्यवहार मुनि, मिथ्या भाव निवार ॥१॥

भावार्थ -हे आत्मा! लोक स्वरूप पर ध्यान लगा अपना शुद्ध स्वरूप देख। इस लोकमें छ द्रव्य है उनमें तू चैतन्य अनत ज्ञानादि गुणयुक्त है। वर्ण, गध, रस, स्पर्श आदि पुद्गल (जडपदार्थ) तुझसे भिन्न है, पथक है और उनसे तू भिन्न (अलग) है। निश्चय और व्यवहार चारित्र पाल कर तुझ यह अपना मिथ्या स्वरूप त्याग देना परम कल्याणकारी है।

दोहा -चौदह राजु उत्तग नभ, लोक पुरुष सठाण।
तामें जीव अनादि से, भ्रमत है बिन ज्ञान ॥

११ बोधभावना'-बोध अर्थात् आत्म स्वरूपका ज्ञान करना ही सारभूत है। मैंने आजतक आत्म-ज्ञान माप्त न किया यही जन्म मरण का कारण हुवा। इसलिये मुझ आत्माका शुद्ध स्वरूप समझ मेरे निज गुण अनत ज्ञान, दर्शन चारित्र, वीर्य मकट करना श्रेयस्कर है।

दोहा -बोधी अपना भाव है, निश्चय दुर्लभ नाहि।
भव में माप्ति कठिन है, यह व्यवहार कहाहि ॥

भावार्थः-बोधि तीनरत्न ज्ञान, दर्शन, चारित्र आत्मा के गुण हैं. ये प्राप्त करना सरल हैं, कारण अपनी वस्तु होनेसे निश्चय में कुछ कठिन नही। जो ऐसी दुर्लभता दिखाई गई है वह व्यवहार से कही गई है। मोक्ष मार्ग (रत्नत्रय) भोगकी विषय इच्छावालेको मिलना कठिन है और जिसने विषयेच्छा दूर की है उसे बिलकुल सरल है।

१२ धर्म भावनाः-ऐसा विचार करे कि यह जीव अनादि कालसे सम्यग् ज्ञान, दर्शन, चारित्र बिना चतुर्गति के अंदर परिभ्रमण कर रहा है. आत्मा अधर्मसे दुःखी होता है और धर्म धारण करनेसे चतुर्गतिके सब संकटों से छूट कर मोक्ष प्राप्त करता है। हिंसा, विषय, कषाय, अज्ञान, मिथ्यात्व ये सब अधर्म है. दुःखके कारणभूत है. इसलिये जिस दिन मैं इन्हे त्यागूंगा अहिंसा, इंद्रिय विजय, अकषाय संयम, सम्यक्त्व गुण आत्मधर्म तथा आत्म स्वरूप में विचरूंगा और नित्य, सत्य, प्रतिपूर्ण, अक्षय, अव्याबाध, अविनाशी, अविचल मोक्षके सुखको प्राप्त करूंगा वह दिन परम कल्याणकारी होगा.

धर्म वस्तुके स्वभावको कहते है. मैंने अनंत ज्ञानादि चारों धर्मोंको मलीन बनाकर उनके बदलेमें अल्पज्ञान, अल्पदर्शन, विषयसुख बालवीर्यरूप अधर्म धारण किया है इसलिये चतुर्गतिमें अनंतकालसे दुःख उठा रहा हूं, जब मै

शुद्ध गुणरूपी धर्म प्राप्त करूंगा तब मुझे अव्याबाध, निराकुल अनंत आत्मिक सुखकी प्राप्ति होगी

दोहा'–जाचे सुरतरु देत सुख, चिंते चिंता रत्न ।
बिन जाचे बिन चितवे, धर्म सकल सुख यत्न ॥१॥

(१०) चौदह नियम

(मेरुके समान पापको विवेकसे राईके समान बनानेके सरल उपाय)

इच्छा, तृष्णा रोकना, संयम है । ऐसा करनेसे आत्माके कर्म बंध घटते हैं और कांट कसरवाला सुखी सादा जीवन बनता है तथा प्रत्यक्ष में बहुत सुख मिलता है । आवश्यकताएं घटाना, थोडेमें काम चलाना, मितव्ययी जीवन है और यही किंचित् संयमी जीवन है । जबतक धन–रक्षाकी एक भावना लगी है तबतक द्रव्य लाभ होता है पर जब विषय त्यागकी समझ पैदा होती है तब भाव–त्याग कहलाता है और उसका फल अपूर्व है । चौदह नियम द्रव्य और भाव सुख देनेवाले हैं । वे हमेशा धारण करना चाहिये.

(१) सचित–कच्चा नमक पानी, पके बीज सहित फल, कची हरी लीलोतीआदि खाने में संयम रखे और मर्यादा करे । जमीकंद न खावे इसमें अनंत सूक्ष्म जीव होते है

(२) द्रव्य–जितने पदार्थ खाये जायँ, उनपर सयम रक्खे। मर्यादा करे।

(३) विगय (विकार उत्पन्न होता है जिससे विकृति–विगय) दूध, दही, घी, तेल, मिठाई (शक्कर, गुड और ऐसी वस्तुएँ) की मर्यादा करे। मद, मास, शहत और मक्खन महाविगय हैं। वे नहीं खावे

(४) पग रक्षाके साधन–मोजे, जोड़े, चपल आदिकी मर्यादा

(५) ताम्बुल–पान, सुपारी, इलायची आदिकी मर्यादा

(६) वस्त्र पहिननेकी मर्यादा.

(७) सूघनेकी वस्तुओंकी मर्यादा

(८) वाहन–गाडी, घोडा, ट्राम, रेल्वे आदिकी मर्यादा.

(९) आसन, बैठने सोनेके

(१०) विलेपन–शरीरके लगानेके तेल, अजन, चदन, कुकु आदिकी मर्यादा.

(११) ब्रह्मचर्य–मर्यादा

(१२) भोजन और पानीकी मर्यादा, प्रमाण और जात.

(१३) दिशा–कितनी २ दूर जाना

(१४) स्नान–मर्यादा।

(१) कच्ची मिट्टी (२) पानी (३) अग्नि–चूल्हा सख्या, ईंधन वजन (४) वायु–पखे आदि (५) वनस्पतिकी मर्यादा

भाव में आत्म हिंसाका त्याग करे जैसे हिंसा असत्य, अप्रमाणिकता, विषय भोग, निंदा, क्रोध, गर्व, कपट, तृष्णा, क्लेश इन सबका त्याग करना। य भाव-शस्त्र है इनसे अपनी तथा दूसराकी भाव हिंसाका घोर पाप तथा दु ख होता है

इस प्रकार जो रोज त्याग करेंगे, आवश्यकताए और आत्माके दोप घटावेंगे, वे सब पापोंसे सरलतासे छूट अनत सुख प्राप्त करेंगे।

(११) मुनिकी भावनाएँ

(१) हमने ससार त्यागा तबसे खाने, पीने, कपडे, मकान, मान, पूजा, निद्रा, गप्पे में कितना सयम किया है, वह सोचूगा और हमेशा सयमकी वृद्धि करूगा, सयम इसलोक तथा परलोक दोना म परमहितकारी है सयमीको हिंसा, झूठ, अप्रमाणिकता, मैथुन, धन सचय, इर्षा, द्वेष, क्रोध, गर्व कपट, लोभ नहीं करना पडता जिससे इस शरीरसे वे रोग, शोक, चिन्ता, भय, तृष्णा, शत्रुता, निंदा, आदि, सकल दु'खासे छूट कर परमानद भोगते हैं और परलोक में तो अनत सुख पाते हैं असयमी मनुष्य यहा रोग, शोक, चिंता, भय, तृष्णा, शत्रुता,से दु खी होते है और परलोकमें भी अनत दु ख पाते है यह बात यथार्थ है, शास्त्रकाराने भी यही फरमाया है.

गाथा –अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो ।
अप्पा दंतो सुही होइ, अस्सिलोए परत्थय ॥१॥

आत्मा दमन करने योग्य है, आत्म दमन करना अति दुष्कर है कारण इस जीवको अनादिसे विषयका दुष्ट व्यसन हो गया है परतु जो आत्म–दमन करते हैं विषय कषाय (भोग–क्रोधादि) छोडते हैं वे इस लोक और परलोकमें सुखी होते है । यदि यहा स्वतत्रासे सयम नही करगें उन्हें परवशपने मार और वधन भोगने पडेंगें

(२) ससार और मोक्षके मार्ग एक दूसरेसे बिलकुल प्रतिकूल है जिससे ससारी सब प्रपच और प्रवृत्तिका त्याग करने के लिये सावधान रहूगा । ससारी धन, वैभव, भोग, मान, पूजा, इद्रिय सुख में आनद मानते हैं जब कि मोक्षार्थी उसे दुःखरूप मानता है.

(३) शरीर मोहका क्षय कर तपस्वी बनूगा तब धन्य होऊगा

(४) खान पान और मान सम्मानकी इच्छा न रक्खूगा ।

(५) तीन मनोरथ अर्थात् भावना (पवित्र दृढ इन्छा) हमेशा अनेक वार चितारूगा और ये गुण प्रकट करूगा ।

(१) अपूर्व तत्व–ज्ञान हमेशा सीखूगा ।

(२) आठ गुणोंको धार एकात आत्मभाव में विचरूगा वही दिन धन्य होओ ।

(१) यथार्थ तत्व निश्चय (श्रद्धावत) (२) पूर्ण सत्य अज्ञान, मिथ्यात्व और कषाय रहित मन, वचन और काया (३) बुद्धिरत्न (हिताहितका निर्णय कर सच्चे मार्ग पर लेजानेवाली विवेकबुद्धि पैदा हो। (४) बहुसूत्री यथार्थ नय, प्रमाणपूर्वक शास्त्रका ज्ञाता (५) शक्तिवंत प्रत्येक अच्छा कार्य करनेमें समर्थ (६) उपशांत कषाय हों (७) धैर्यवंत दुखसे कभी न घबराव (८) वीर्यवंत –सदा पुरुषार्थी, ये गुण मुझ प्रगट होओ।

(३) आजतक अठारह पाप और आठ कर्मबंधके कारणोंका सेवन किया उनका हमेशा पश्चाताप कर माया (क्रोध, मान कपट, लोभ), नियाण (इंद्रिय सुखकी इच्छा) मिथ्यात्व (विपरीत समझ), ये तीन शल्य सर्वथा दूर कर आराधिक पद पंडित-मरण प्राप्त करूंगा वही दिन धन्य होगा, रोज सभी पापोंका प्रायश्चित (आलोचना) करूंगा तभी आराधिक पद प्राप्त होगा।

(६) शिष्य लोभ, सम्प्रदाय मोह, पूजा प्रशंसाकी इच्छा क्षत्र, शरीर, वस्त्र, पात्रादिका ममत्व मिथ्या रूढियोंमें पक्षपात कदाग्रह, कलह आदि सब दोष दृढतासे त्यागूंगा तभी सुखी होऊंगा।

(७) गुणानुराग, इंद्रियदमन, तत्वोंका पठन पाठन, मौन, ध्यान, समाधि आदि गुण प्राप्त होओ।

(८) शुद्ध पच महाव्रत, पाच सुमति, तीन गुप्ति, दस क्षमादि धर्म, बारह प्रकारका तप, २७ साधुके गुण आंतरिक उपयोग सहित सदा आत्म-जागृति भावसाधु और निश्चय साधुके गुण प्रगट होओ

(९) दिनके चार भाग करूगा। छ घटे तक नया ज्ञान सीखूगा, पढ़ूगा, तीन घटे तक सीखा हुआ ज्ञान रातको याद करूगा, चिंतन करूगा, तीन घटे ध्यान, उत्तम भावनाएँ और तत्त्वोंकी पहिचान एवम् पढे हुए ज्ञानके रहस्य पर विचार करनेमें लगाऊगा, छ घटे आहार निहार प्रतिलेहन आदिमें विताऊगा और छ घटे निद्रा लूगा साधु जीवनको सफल बनानेके लिये मैं इस प्रकार नियमित रीतिसे व्यवहार करूगा प्रभुकी आज्ञा मुताबिक बारह घटे स्वाध्याय, छ' घटे ध्यान, तीन घटे आहार निहार और तीन घटे तक निद्रा लूगा वही दिन धन्य होगा.

(१२) पात्रापात्रका स्वरूप और सुपात्र होनेकी भावानाएँ

पूर्व कथित भावनाओंके सब गुण सुपात्रम मिलते है इसलिये सुपात्र बननेका उद्योग करना आवश्यक है। पात्रके पंद्रह भेद हैं जिनमें ३ भेद मुख्य है (१) सुपात्र (२) अल्पपात्र (३) और अपात्र

यहा सत्य सुख आत्मिक सुख अर्थात मोक्षके पात्र कौन है, इस अपेक्षामे पात्रका विचार किया गया है

(१) सुपात्र —जो व्यवहारिक और निश्चयात्मक दोनो गुण धारण करता है वह सुपात्र है व्यवहारके भी दो भेद है

(१) द्रव्य और भाव, द्रव्यमें हिंसा असत्य, अप्रमाणिकता, अन्याय, अनीति, विकारी जीवन और कोई भी व्यसनादि दोष न हों और बाह्य साधन, अच्छा पठन पाठन, सद्गुणीकी सेवा, सत्सग आदि गुण जिनमे हो वह द्रव्य शुद्धि है। अतरात्मा में अज्ञान, विपरीत मान्यता (मिथ्यात्व) क्रोध, गर्व, कपट, तृष्णा, विपयेच्छा, राग, द्वेष, हर्ष, शोक, चिंता, भय, कायरता न हो वह भाव शुद्धि है, द्रव्य और भाव शुद्ध हो तो व्यवहार में शुद्ध समझा जाता है।

निश्चयशुद्ध निश्चय अर्थात् सत्य स्वरूप जीव अजीवादि नव तत्वको नय और प्रमाण से यथार्थ समझना, सत्य, श्रद्धा,

निश्चय कर तत्वार्थ के ज्ञाता बनता और शुद्ध आत्म स्वरूप का अनुभव करना यह निश्चय शुद्ध. जहा निश्चय शुद्ध है वहा व्यवहार शुद्ध अवश्य रहता है परतु जहा व्यवहार शुद्ध होता है वहा निश्चय शुद्ध होता है और नहींभी होता है। इस प्रकार सुपात्र बनने वालेको व्यवहार और निश्चय दोनो शुद्ध रखना चाहिये और वही मोक्ष (सत्य सुख) के योग्य है । ये सब गुण मुझ में प्रकट होओ ।

(२) अल्पपात्र'–जो व्यवहार शुद्ध है पर निश्चय शुद्धि (तत्वार्थ निश्चय और शुद्ध आत्मानुभव) नहीं है वह पुण्य सचय करता है. वह देव तथा मनुष्य के वैभव प्राप्त कर सकता है पर–मोक्ष–अक्षय सुख नहीं पा सक्ता । यहा जिस आत्माको सत्य पानेकी जिज्ञासा होती है, सत्य पाकर सुपात्र बन सकता है । मैं भी इन गुणों द्वारा सुपात्र बनु

(३) अपात्र.–जिसमें बाह्य और आतरिक गुण रूप व्यवहार शुद्धि और शुद्ध आत्मानुभवरूप निश्चय शुद्धि न हो वह अपात्र है. ये दोष दूर होकर मुझे सुपात्र के गुण प्राप्त होओ।

उत्तम सुपात्र (साधु) के तीनभेद–मध्यम सुपात्र (श्रावक) के तीनभेद. लघु सुपात्र (समदृष्टि) के तीनभेद यों नौ प्रकार के सुपात्र है. तीन अल्प पात्र और तीन अपात्र इस प्रकार पात्र के कुल पद्रह भेद कहे गए है ।

(१) श्रेष्ठ उत्तम सुपात्र' सर्वज्ञ वीतराग प्रभु

(२) मध्यम उत्तम सुपात्र – अप्रमादी मुनि

(३) लघु उत्तम सुपात्र – व्यवहार निश्चय ज्ञान, दर्शन, चारित्र तपके धारक मुनिवर।

(४) श्रेष्ठ मध्यम सुपात्र – साधु समान त्रिकरण, त्रियोग, से सर्व पाप के त्यागी श्रमण भूत, ग्यारहवीं प्रतिमा धारी शुद्ध आत्मानुभव करनेवाले सुश्रावक

(५) मध्य मध्यम सुपात्र – नव वाड सहित विशुद्ध प्रतिपूर्ण ब्रह्मचर्य नामका सातवीं प्रतिमा से सपाप (सावद्य) प्रवृत्ति के त्याग नामकी दसवीं प्रतिमा के धारी सुश्रावक

(६) लघु मध्यम सुपात्र उदासीन वैराग्ययुत शुद्ध बारह व्रतधारी, शुद्ध आत्मानुभव करनेवाले सु श्रावक तथा पहिली प्रतिमासे छठी प्रतिमा तकके श्रावक

(७) उत्तम लघु सुपात्र – क्षायक सम्यक्त्वी

(८) मध्यम लघु सुपात्र – उपशम सम्यक्त्वी

(९) जघन्य लघु सुपात्र – क्षयोपशम सम्यक्त्वी

तीनों लघु सुपात्र – मिथ्यात्व उत्पन्न करनेवाली सात प्रकृतिका अभाव करनेसे होते हैं उनमें शुद्ध आत्मानुभव सहित व्यवहार सम्यक्त्वके सकल गुण होते हैं

मिथ्यात्वकी सात प्रकृति—

पर वस्तु को अपनी समझ क्रोध, गर्व, कपट, लोभ (रागद्वेष) करना, अनंत दु खका कारण, अनंत संसार बढाने

वाला, अनंतानुबंधी कषाय है अतत्व श्रद्धा, असत्यमें आनंद, मिथ्यात्व मोहनी है, कुछ सत्य कुछ असत्य दोनों में आनंद, मिश्र मोहनी है, सत्य में किंचित् मलीनता शंकादि समकित मोहनी है। इन सातों मिथ्यात्व प्रकृतिका क्षय होओ।

(१०) उत्तम अल्प पात्र–व्यवहार (द्रव्य–भाव) चरित्र शुद्ध है परंतु आत्मानुभव नहिं हुआ ऐसे मुनि

(११) मध्यम अल्पपात्रः–आत्मानुभव विना जिनका द्रव्य-भाव शुद्ध है वे श्रावक

(१२) जघन्य अल्प पात्र.–जिनमें व्यवहार सम्यक्त्व के गुण है पर जिन्हें आत्मानुभव नहीं.

(१३) मुख्य अपात्र'–जिन्हे शुद्ध आत्मानुभव नहीं हुआ और जो व्यवहार उत्तम चारित्रवान नहीं ऐसे साधु.

(१४) मध्यम अपात्र –जिन्हे शुद्ध आत्मानुभव भी नहीं और जो विवेक पूर्वक उत्तम व्रत पच्चखाण भी नहीं पालते ऐसे नामधारी श्रावक

(१५) जघन्य अपात्र'–जिन्हें शुद्ध आत्मानुभव भी नहीं और जिसमें समभाव, धर्म–भक्ति, वैराग्य, अनुकम्पा श्रद्धा आदि गुण भी नहीं है ऐसे सम्यक्त्वी नामधारी जैन और सब मिथ्यात्वी

भावना–मुझमें अपात्र के दोष भरे है उनका क्षय होओ और सुपात्रके गुण प्रकट होओ

(१३) असंख्य समूर्छिम पचेंद्रिय मनुष्यकी रक्षा, अपनी रक्षा और आरोग्य लाभ

शरीरसे निकले हुए पदार्थोंमें अंतर मुहूर्तमें असंख्य मनरहित (असंज्ञी) पचेंद्रिय मनुष्य प्रतिक्षण उत्पन्न होते हैं जिनकी काया अंगुल के असंख्यात वे भागकी और आयुष्य अंतर मुहूर्तका रहता है। यदि मल मूत्रादि शरीरके अशुभ पदार्थ खुली जगहमें जल्दी सूख जाय वहा दूर डाल जायँ तो जीवकी हिंसा तथा दूसरा आरोग्यमें हानि पहुचानेके पापसे बच जायँ और स्वयं भी निरोग बने रहें। उन समुर्छिम मनुष्योंके उत्पन्न होनेके १४ स्थान हैं (१) दस्त (२) पशाब (३) खखार कफ (४) नाकका सेडा (५) उल्टी-कै (६) पित्त (७) रस्सी (८) खून (९) वीर्य (१०) वीर्यादि पदार्थ सूख कर फिर गीले हो (११) जीव रहित मृत शरीर (१२) स्त्री पुरुषके संयोग (१३) गटर, खाली, मोरी (१४) सब ऐसे गंदकी के स्थानोंमें कितने ही स्थानपर एक बरतनमें पेशाब कर सुबह डालते हैं। ऐसा नहीं करना चाहिये। पेशाब पर पशाब नहीं करना चाहिये। टट्टीमें जंगल नहीं जाना, झूठा जहा तहां नहीं डालना, ढोरोंको पिला देना आदि नियम यतनी कोशिशसे पालना चाहिये. आरोग्यके साधारण नियमोंका ज्ञान न होनेके कारण एवम् आलस्यसे हिन्दमें रोग और पाप बढते जाते हैं तथा गंदकी की

खराब हवासे विकार बढते है और इससे दुर्बल शरीर हो जाता है तथा विषय-लालसा बढ जाती है। जिसके फलमें अनीति, वीर्य हानि तथा रोग होकर मनुष्य भव, पुण्य और धर्मका नाश हो जाता है इसलिये गदकी बढी सब तरह सुखी होना

ब्रह्मचारी मुनि खुल्ली हवामें और तापमें जगल (टट्टी, पायखाना) जाते है, खुल्ले पाव चलते है, गटरवाले सडा-सका कामर्मे लेते नहि है और स्नान वगेरेकी प्रवृत्ति करते नहि है तो भी निरोगी रहेते है जत्ना-विवेक वहाहि धर्म है.

(१४) विद्यार्थी भावना.
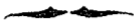
प्रत्येक विद्यार्थीके लिये सदा प्रात कालम प्रभुस्तुति करनेके बाद अवश्य चिंतवन करने योग्य, ये भावनाएँ हैं। मनुष्य जबतक सर्वज्ञ न हो तबतक विद्यार्थी ही रहता है, इसलिए प्रत्येक मनुष्यको इन भावनाओंका निरतर ध्यान करना चाहिये।

(१) हे परमात्मा! मै आपको भावपूर्वक नमस्कार करता हूँ। आपके समान मेरी आत्मामें भी अनत ज्ञान, अनत दर्शन, आत्मिक सुख और अनत आत्मिक शक्ति-ये चार मुख्य गुण भरे है परन्तु अज्ञान आदि ग्यारह दोषोंके सेवन करनेसे मेरे ये गुण मलीन होगए। अब मुझे यह उत्तम मनुष्य-जन्म मिला हुआ है। मै इन सब दोषोंको छोडकर आपके तुल्य बननेका पुरुषार्थ करूगा।

(२) दोषोंको नाश करनेके उपायः—१ सत्य ज्ञानसे अज्ञान का नाश करूगा, २-सद् विवेक (सम दृष्टि) से अधता (मिथ्यात्व) का नाश करूगा, ३-अहिंसासे हिंसाको छोडूंगा, ४-सत्यसे असत्यको छोडूँगा, ५-ईमानदारी से चोरी छोडूँगा, ६-ब्रह्मचर्यसे विषयवासनाका नाश करूँगा, ७-क्षमासे क्रोधको शान्त करूँगा, ८-विनयसे गर्व छोडूंगा, ९-सरलता से कपट छोडूंगा, १० सतोषसे

तृष्णाका नाश करूंगा, ११ सत्पुरुषार्थ से तृष्णाका नाश करूँगा। इस प्रकार इन ग्यारह गुणोंद्वारा ग्यारह दोषोंका नाश करके हे प्रभो ' म आपके तुल्य बनूँगा।

(३) यह शरीर मिट्टीका है। यह मिट्टी भारत देशकी है। मैं भारत देश और भारत वासियोंके हितके लिए अपने शरीर बुद्धि, शक्ति, धन, सत्ता तथा सारे वैभव अर्पण करूँगा परन्तु सभी अवस्थाम अहिंसा, सत्य, सद्विवेक आदि ग्यारह गुणोंहीका पालन करके विजय पाना सदा लक्ष्यम रखूँगा। शरीर, धन, सत्ता, वैभव आदि निश्चय ही नाशवान् हैं, इसलिए इनके द्वारा सत्कर्म करना ही उचित है। वैसा करना मेरा अपना ही आत्मकल्याणका काम है। अत सत्कार्योंके करनेको मैं परोपकार अर्थात् दूसरों पर उपकार नहीं मानूँगा परन्तु आत्मोपकार (निजका उपकार) मानूँगा।

(४) द्रव्य (धन) पैदा करनेके लिए अथवा बाह्य लाभ हीके लिए मैं नहीं पढता हूँ परन्तु शरीर, मन और आत्माकी उन्नति कर स्व पर (अपना और औरों) का कल्याण करनेमें समर्थ बननेके लिए मै पढता हूँ।

(५) सभी बुरी आदतें, दुर्व्यसन-चाय, कोफी, तमाकू, बीडी, गाजा, भग आदि नशेकी चीजें, मसालेदार खुराक, नाटक, सिनेमा, वेश्यानृत्य, कुरुचि पैदा करने वाले उपन्यास, नावेल आदि शत्रुओंसे मैं सदा बचूँगा।

सदाचारी, सयमी और उत्तम चारित्रवान बनूगा तथा जीवन सुधारकी ही उत्तम पुस्तकें सदा प्रेमसे पढूँगा।

(६) मै विद्यार्थी हूँ। मुझे पढना है अर्थात् मुझे सीखकर शिक्षा पाना है। शिक्षा किसे कहते है? जिससे बुद्धिका विकास हो, जो कैसा भी अवसर क्यों न हो, सद्बुद्धि उत्पन्न कर सच्चा मार्ग दिखावे, जो हित और अहित दोनाको पहिचानना सिखावे और उनमें मे से अहित तजकर हित ही ग्रहण करनेकी बुद्धि पैदा करे और जो निर्दोष आनन्द और सच्चा सुख प्राप्त करावे उसीका नाम शिक्षा है।

शिक्षा तीन प्रकारकी है:-१ शारीरिक,२ मानसिक ३ आत्मिक

(१) म शारीरिक शिक्षा लूँगा-अर्थात् उपर्युक्त व्यायाम आदि और नियमित ढगसे शरीरको कसूगा, और अपना प्रत्येक काम स्वत. मन लगाकर करना सीखूँगा, शारीरिक कष्टको बल बढानेका साधन मान, हर्षपूर्वक श्रम (मिहनत) का काम करूँगा।

(२) मैं मानसिक शिक्षा लूँगा -अर्थात् प्रत्येक बातमें मुझे कौनसी हितकारक है और कौनसी अहितकर, यह जानना सीखूँगा तथा मानसिक शिक्षाके लिए मै अच्छी पुस्तकें, पत्र पत्रिकाओं आदिका वाचन मनन करूँगा और सत्सगत करूँगा। स्कूलों और कालिजोकी शिक्षा मानसिक शिक्षा प्राप्त करनेका साधन है। केवल डिग्रियां पा लेना और अपना

ज्ञातिबंधुओंका, सब समाज और देशका हित न सोचना अक्षर पाण्डित्य है–शिक्षा नहीं। शिक्षा वही है जो सदाचारी और परोपकारी बनावे। स्वार्थी बनानेवाली शिक्षा कुशिक्षा है। मैं ये बातें खास ध्यानमें रखूंगा।

३ मैं आत्मिक शिक्षा लूंगा,—अर्थात् आत्माको अजर, अमर और ज्ञानादि अनंत गुणोंका भण्डार मानूंगा और अहिंसा, सत्य, प्रमाणिकता, ब्रह्मचर्य, संतोष, क्षमा, दया, विनय, सेवाभाव और संयम आदि गुण प्राप्त करनेका निरंतर प्रयत्न करूँगा।

ऐसी शिक्षाएँ प्राप्त करूँगा तभी शिक्षित कहलाने योग्य बनूँगा और ये ही शिक्षाएँ मुझे सच्चा सुख देंगी।

(७) इस प्रकार शिक्षा प्राप्त कर मैं बचपनसे ही निर्भय, सादा, पुरुषार्थी, धर्म श्रद्धावंत, दयालु, सेवाभावी, सत्यवादी, ब्रह्मचारी संतोषी, उदार और विषय संयमी बनूँगा।

(८) माता, पिता, गुरु, वृद्ध जन आदि प्रत्येक पुरुषको आदरकी दृष्टिसे देखूँगा और उनकी सुशिक्षानुसार व्यवहार करूँगा। कभी सामने नहीं बोलूँगा। मैं सच्चा होऊँगा तो पहिले उनको शांत करके फिर सत्य निवेदन करूँगा।

(९) उपरोक्त रीतिसे शरीर, बुद्धि और आत्माका विकास कर मनुष्य जन्मको देवोंसे भी पूजनीय बनानेका मैं हमेशा प्रयत्न करूंगा।

(१०) इन सबकी नींव शुद्ध ब्रह्मचर्य है। इसलिये इसका पालन करनेके निमित्त मै स्वादपर सयम रक्खूँगा, मेरी दृष्टि शुद्ध, नीची रक्खूँगा। आखोको वशम रखूगा और विकार बढाने वाले सयोगोसें बचूगा।

(११) हस्त मैथुन, सृष्टि विरुद्ध कर्म (पुरुषका पुरुषके साथ मैथुन) और बाललग्न, ये तीनो शरीर, बुद्धि, बल, आयुष्य, पुण्य, सुख और धर्मके नाशक, रोग, शोक पैदा कर जीतेजी नर्कमें डालनेवाले है, इस लिए इनसे मैं हमेशा बचूगा। मै यह प्रतिज्ञा लेता हूँ।

(१२) बुरी सगति, एक साथ सोना, एकातमें खेलना, छिपा-लुकीका खेलना, घोडा घोडी बनने आदि खेलोंसे कई बालकोंकी बुरी आदत होजाती है। जैसे आँख, नाक आदिमे खुजली चलनेपर उसे खुजालने के लिए इन अगोको काच या पत्थरसे खुजालनेवाला दु खी होता है उसी प्रकार पिशाबके स्थानमें भी यदि खुजली चले तो उसे रोग समझना चाहिये। इसे विषय कहते हैं। जो इस खुजलीको सुविचार तथा सयमद्वारा मिटा देते हैं वे बहुत सुखी रहते ह। और बुरे काम करनेवाले भयकर दुःख उठाते है। जैसे अण्डेको हिलानेसे उसके अन्दरका जीव बाहिर निकले विना ही मर जाता है, उसी प्रकार बालक अवस्थामे कुकर्म करनेसे वीर्य स्पष्टरूपसे निकलता

मालूम नहीं देता परन्तु पिशाचद्वारा वीर्य क्षय होना प्रारम्भ हो जाता है। इसे धातुक्षय कहते हैं। बुरी आद तोंसे वीर्य क्षय होनेके कारण बुद्धि, बल, सुख, आयुष्य, पुण्य और धर्मसे हाथ धोना पडता है। ऐसा जानकर इस दोषको जीवन पर्यंत त्यागूंगा। ऐसी दृढ प्रतिज्ञा लेना बहुत आवश्यक है आज अनेक बालकरूपि रत्न बुरी आदतोंरूपि अग्निमें खाक (राख) हो रहे हैं। उनको ज्ञान प्राप्त होकर अपनी (निजकी) रक्षाकी सुबुद्धि सदा प्रकट रहो, यही मेरी भावना है।

(१३) ब्रह्मचारी–विद्यार्थी जीवन ही जीवनका सुखमय समय है यह जीवन जितना पवित्र और लम्बा होगा उतनाही सुख और मोक्ष समीप रहेगी, इस लिये मैं ब्रह्मचारी जीवन ज्यादा लम्बा बिताउंगा

(१४) पुरुषके २५ वर्ष और स्त्रीके १६ वर्ष पहेले वीर्यादि मुख्य धातुएँ कच्ची होती है इसलिये इस आयुके प्रथम हुए लग्न अत्यंत हानिकारक है। इस आयुके प्रथम लग्न हो तो अनेक रोग आघेरते हैं और मंद बुद्धि प्राप्त होती है, वृद्धावस्था जल्दी आती है और उम्र भी थोडी मिलती है। इसके परिणाम स्वरूप संतान भी ऐसी ही होती है जिससे दूना दुःख उठाना पडता है। एक अपना और दूसरा संतानका। और वंश-परंपरा देश, जाति, तथा समाजको दुःखी बनानेका

लगता है, इस लिये इन सब दोषोंसे बचनेका हमेशा प्रयत्न करना चाहिये। ब्रह्मचर्य पालने में जो कष्ट (श्रम) है उससे करोडो गुनो कष्ट (दु:ख) ब्रह्मचर्य नहीं पालनेवालेको इसी ही जन्म में तत्काल भोगने पडते है. जहाजमें पडा हुआ छेद बंध करनेतुल्य कष्ट ब्रह्मचर्य मे है। जहाज, खुद और धनके नाशके दुःख तुल्य विषयभोग है।

(१५) पुरुषको धातु २५ वर्षमे पकती है। और स्त्रीकी १६ वर्षमे, इन धातुओंका शरीरमें पूर्ण होनेका समय पुरुषके लिये ४० वर्ष और स्त्रीके लिये २५ वर्षका है। जो व्यक्ति इतने काल तक शुद्ध ब्रह्मचर्य पालता है वह मनुष्य पूर्ण सुखी बनता है। और उसको संतान भी महान् वीर, धीर, विद्वान, मनुष्यरत्न, उत्पन्न होती है, इस लिये इस उम्र तक मै ब्रह्मचारी बना रहू, ऐसी मुझमें शक्ति प्रकट होओ।

(१६) अखंड ब्रह्मचर्य अर्थात् जीवनपर्यंत ब्रह्मचर्यका पालन करनेकी शक्ति शरीरधारी आत्माको भी परमात्म स्वरूप बना देती है इस लिये जब मैं सब इंद्रियोंका निरुधन कर इच्छाओंको रोकूगा, आत्म ध्यानमें स्थिर रहूगा और प्रतिपूर्ण ब्रह्मचर्य पालकर परमात्म पद प्राप्त करूगा वही दिन धन्य होगा

(१७) विनयसे विद्या प्राप्त होती है और विद्याकी सफलता सचारित्रसे होती है। विनयके तीन प्रकार हैं।

(१) मनसे–विद्या, विद्यागुरु और विद्वानों की ओर पूज्यभाव और बहुमान रखूंगा।

(२) वचनसे–विद्या, विद्यागुरु और विद्वानोंका गुण गाउंगा, स्तुति करूंगा।

(३) कायासे- विद्यागुरु और विद्वानोंको नमस्कार करूंगा और हमेशा उनकी सेवा भक्ति करूंगा

विषको जानकर भी जो खाता है वह मरता है इसी प्रकार विद्या पढ़कर भी दोष त्यागके जो सदाचारी नहीं बनते वे दुःखी होते है, इस लिये मैं विद्या शीख सद्‌चारित्र-वान बनूंगा।

(१८) विकार दूर करनेवाला ज्ञान ही विद्या है यह शरीर, मन, और आत्माके मलको, दोषोंको और विकारको दूर निर्दोष तथा निरोगी बनाता है। खूब भूख लगे तब खूब चबा कर किया हुआ सादा आहार, ब्रह्मचर्य और उपवासके शरीरके विकार (रोग)को दूर करते हैं। अच्छी भावनाएँ अच्छा पाठ मनन और सत्सग तथा विषयवासना पर सयम, य मनके दोषको दूर करते है और तत्वज्ञान आत्मस्वरूपका ज्ञान ये आत्माको दोषोंसे बचनेका मार्ग दिखाते है और सचारित्र आत्माको शुद्ध करते हैं। ऐसी सद्‌विद्या मैं प्राप्त करूंगा।

(१९) वृक्षकी आरोग्यतासे फलकी आरोग्यता रहती है। इसी प्रकार देशकी उन्नति में मेरी उन्नति रही हुई है। मै मेरा जीवन देश सेवामें बीताऊगा और जैसी स्थिति अमेरीका देशकी स्वामी सत्यदेवजीने अपने अपने साढे पाच वर्षके गाढ अनुभवसे भजनमें प्रगट की है वैसी उत्तम विषयोंमे उन्नति में भारत देशकी करूगा। प्रत्येक देश, जाति और मनुष्य मे गुण दोष दोनो होते हैं। मैंतो मधु मक्खीके समान उत्तम गुण ही सब स्थानोंसे हमेशा ग्रहण करूगा–

हर एक मर्द औरत, जिसको था मैंने देखा, ।
वह देश हित नशेमे, फलानथा समाता ॥१॥
चाहे जान तनसे जावे, परदेश पे फिदा है, ।
छोटे बडो मे सब में, दुब्दे वतन था पाता ॥२॥
उनकी है एक भाषा, और एक राष्ट उनका, ।
अच्छे साहित्य द्वारा, उसका है यश बढाता ॥३॥
खतरे मे जब मुलक हो, और कोई आवे दुश्मन, ।
क्या मर्द हो क्या औरत, झण्डे के नीचे आता ॥४॥
आपसमें चाहे कितने, मझहबी फसाद होवें, ॥
पर देश हितके सन्मुख, सब कुछ है भूलजाता ॥५॥
तालीम तो यहा पर, सबको मुफ्त है मिलती,
कैसा ही हो अभागा, वह भी इल्मको पाता ॥६॥

उनहे यहा की चीजे, हर एक मुल्क जाती, ।
खिंच खिंचके धन जहासे, उनके यहा है आता ॥७॥
न उच नीच जाने, न छुतछात माने, ।
सबके हरक बराबर, सबकी है एकमाता ॥८॥
भारतको गर उठाना, चाहते हो दिलसे अज्जुम, ।
तो एक भाषा करदा, तज उच नीच नाता ॥९॥

(२०) इस भारतदेशम हमेशा करीब चार करोड मनुष्य भूखे रहत है। एसी हालत मे ऐशआराम, मौज, शौख, विलासी पदार्थ, फेशनका सर्वथा त्याग करूगा सादी खादी पहिन कर सर्व मे जीवन बिताऊगा तथा सर्व बचत देश हितम लगाऊगा

(२१) विद्याका सार "सदाचार" है सदाचार अहिंसा, सत्य, और पुरुषार्थ है। मैं इन तीन गुणोंको धारण कर मनुष्य जीवनको सफल करूगा

---

(१५) ब्रह्मचर्य प्राप्ति और उसकी रक्षाकी भावनाएँ

(त्यागी और भोगी प्रत्येक को इन भावनाओंका अवश्य चिंतन करना चाहिये)

(१) सुखका मूल शुद्ध ब्रह्मचर्यका सदा पालन होओ।

(२) दु खदाई विषयेच्छाका नाश होओ ।

(३) क्षणमात्र मिथ्या सुख बतानेवाले और बहुतकाल तक दु ख देनेवाले विषय प्रसगका त्याग होओ ।

(४) अनत अक्षय सत्य सुख देने वाले शुद्ध ब्रह्मचर्यका प्रतिपालन होसके ऐसे सयोग रहे ।

(५) चारित्र गुणका नाश करनेवाली विषयेच्छा नष्ट होओ ।

(६) चारित्र गुणको शुद्ध पालन करानेवाला ब्रह्मचर्य प्रकट होओ । विकारी सुख क्षय होकर अविकारी सुख प्रकट होओ ।

(७) मोक्ष मार्ग में विघ्न करनेवाली भोगेच्छा नष्ट होओ ।

(८) मोक्षको शीघ्र प्राप्त करानेवाला शुद्ध ब्रह्मचर्य पूर्णतासे पालन होओ । सकल दुःखोंका नाश ब्रह्मचर्य से ही होगा ।

(९) सर्व अनर्थोंकी खान भोगेच्छाका नाश होओ । सर्व सिद्धिका कारण अखड ब्रह्मचर्य प्राप्त होओ ।

(१०) नव वाड सहित शुद्ध ब्रह्मचर्यका पालन होओ । स्त्री-पुरुष सबधी भोगका त्याग सो स्थूल-ब्रह्मचर्य, पाच इंद्रियोंके विषयका त्याग सो व्यवहार ब्रह्मचर्य, और शुद्ध आत्म स्वरूप में रमणता सो निश्चय ब्रह्मचर्य मुझे प्राप्त होओ

(११) सब रागोंकी मूल (जड) आयुष्यका शीघ्र अंत करनेवाले और रोगी, भाररूप संतानको उत्पन्न करनेवाले विषयानंदका नाश होओ।

(१२) हाड, मांस, मूत्र, मल मूत्र, कफ, कीडे, आदि से पूर्ण अशुचिमय और दुर्गंधी देनेवाले शरीर परसे मोह हठो ओर विषय वासनाका नाश होओ और हमेशा विषय पर (कब्जा) संयम रहा।

(१३) जहां मोह रहता है वहां जन्म होता है, इस न्यायसे शरीर में कीडे बनकर जन्म होने के कारण रूप भोग-विषयकी इच्छाका नाश होओ। और परम सुखदाई ब्रह्मचर्यका पालन होओ। विषयकी इच्छा मात्र से दुर्गति मिलती है तो उसका सेवन करना कितना दुखदाई होगा? ऐसा समझ हमेशा विषयका त्याग करुंगा।

(१४) एक समय भोग करनेमें असंख्य कीडे, असंख्य पचेंद्रिय असज्ञी (समुर्छिम) मनुष्य और अनेक सनी मनुष्यकी हिंसा होती हे जिससे भोगके फलमें अनंत जन्म मरण करने पडते ह ऐसी भोगेच्छा नष्ट होओ और अभोगी ब्रह्मचर्य पालनेका गुण प्रकट होओ। दूसरोंकी रक्षा करना निश्चय हीं अपनी ही रक्षा है।

(१५) आत्माको भुलाकर पर वस्तुमें लीन करनेवाली विषयेच्छाका नाश होओ। ब्रह्म अर्थात् आत्मा, चर्य अर्थात्

रमण करना आत्म लीनतारूपि ब्रह्मचर्य प्रकट होओ। आत्माके चारित्र (रमणकरना) गुणकी मलीनता ही विषयेच्छा है सो नाश होओ और चारित्र गुण (सुख) की निर्मलता रूप ही ब्रह्मचर्य-स्वरूप रमणता प्रकट होओ।
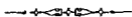
(१६) ब्रह्मचर्यका नव वाडकी भावनाएं।

ब्रह्मचर्यकी रक्षाके लिये नव वाड (मर्यादा) की अत्यत आवश्यकता है। उनका मैं बराबर पालन करूंगा वाड (मर्यादा) का पालन ही ब्रह्मचर्यका पालन है।

(१) स्त्री (पुरुष) पशु, नपुसक रहित तथा विकार रहित मकान में रहूंगा जैसे बिल्लीवाले स्थान मे चूहों को रहना जोखिमकी वात है वैसे ही उपरोक्त स्थान मे रहेने से ब्रह्मचारीका जोखिम है.

(२) स्त्री (पुरुष) की तथा विषयोत्पादक कथा-वार्तालाप नही करूंगा, नही सुनुंगा और न ऐसी बातें ही पढूंगा। जैसे भाटके वचनोंसे वीर पुरुषको वीररस चढजाता है उसी प्रकार विकारकी इच्छा जाग्रत हो जाती है। इसलिये नाटक या सिनेमा देखना या नॉवेल पढना त्यागुंगा

(३) जहा स्त्री बैठी हो वहा पुरुषको दो घडी तक न बैठना चाहिये और जहा पुरुष बैठा हो उसी स्थान पर स्त्रीको

बारह मुहूर्त तक नहीं बैठना चाहिये (इतना नहीं बन सके तो उस स्थान पर अपना आसन बिछाकर उसपर बैठना चाहिये क्योंकि वीर्य में १२ मुहुत (साडा नव घटा छ मीनीट तक गर्भ धारण करनेकी सामर्थ्य है). समीप और एक आसनपर भी नहीं बैठना चाहिये, जैसे घीका घडा और अग्निका दृष्टात

(४) स्त्री (पुरुष) का रूप, वस्त्र, अल्कार (गहने) अगो पाग नहीं देखूगा, दृष्टि सदा नीची और विकार रहित रखूगा, सूर्य के सन्मुख कभी आख वालेके देखनेसे आखे चली जाती है उसी प्रकार रूप देखने से ब्रह्मचर्य गुण मलीन हो जाता है और दृष्टि-कुशीलका पाप लगता है। प्रथम दृष्टि से ही भाव विषयेच्छा जाग्रत होती है एक सीढी पर से लुढकने वाला सो सीढी भी गिरजाता है वैसे ही आख पर अकुश नहीं रखनेवाला प्रथम पहिचान करता है फिर बात करता है, परिचय बढाता है और अनेक बार ब्रह्मचर्य से चूक जाता है इसलिये प्रथम से ही बचते रहना अत्यत आवश्यक है। ब्रह्मचारीका बाजार, मेले, नाटक, सिनेमा, नाच, लग्न आदि विकार बढानेवाले दृश्य नहीं देखने चाहिय।

(५) स्त्री पुरुषके विषय भरे हुए शब्द नहीं सुनुगा दम्पति सोते हो और जहा उनके शब्द सुन पडते हो वहा

नहीं रहूगा। क्योंकि मेघ गर्जारव और मयूरका दृष्टात इसपर लगता है।

(६) पूर्व भोगे हुए भोगोको कभी याद नही करूगा. जैसे पुराना वैर और प्रिय जन का वियोग याद आता है तब क्या दशा होती है ?

(७) विकारवर्द्धक पदार्थ, (घी, दूध, आदि पौष्टिक वस्तुए विशेष और तेल, मिर्ची, मसाला, खटाई आदि) नही खाऊगा जैसे सन्निपातवाले को दुध शक्कर मार डालती है उसी प्रकार ये वस्तुए विषय जागृत करती है। यह भाव विष है। विषयका अर्थ विकृति जो विकार करे, बिगाड करे, स्वरूपको भूलावे सो विषय

(८) ज्यादा भोजन और पानी आलस्य, रोग और विकार पैदा करता है। सेर भरकी हडीमें सवा सेर खिचडीका दृष्टात। या तो हडी फूट जाय या खिचडी ढुल जाय। ज्यादा भोजन से अजीर्ण हो रोग हो या विकार जागते है।

(९) शरीरका शृगार नहीं करूगा। मिष्ट पदार्थ और मक्खीका दृष्टात। सुगधी फूल और भ्रमरका दृष्टात। जहा मिठास हो वहा मक्खिया अवश्य जाव उसी प्रकार शरीरको सुशोभित करनेवाले के पास विषयी जीव अवश्य जावे। ये नव वाड सहित ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिये और १० वाँ किला है जिसकी सबसे विशेष आवश्यक्ता है।

(१०) मनको रूचे ऐसे विकारी शब्द, रूप, रस, गध और स्पर्शका भोग न करूगा तथा उनकी अभिलाषा (इच्छा) भी न करूगा।

इन दस बोलोंको शास्त्र मे दस ब्रह्मचर्यकी समाचारी या दस जातका ब्रह्मचर्य भी कहा है एक भी वाड तोडने से सात प्रकारकी हानि होती है ऐसा सर्वज्ञ देवने फरमाया है।

(१) शका-(स्वय ब्रह्मचर्यमें अस्थिर रहे, पालू या न पालू ऐसे भाव उठें, या दूसरे लोग शका करे कि यह ब्रह्मचर्य व्रत पालता होगा कि नही ?) (२) काक्षा-विषयभोगकी इच्छा जगे। (३) वितिगिच्छा-ब्रह्मचयमे प्रेम और रुचि घट जाय और उसका अपूर्व फल भूला जाय। ४ भेद हो-भाव ब्रह्मचर्य नाश हो जाय, मन विषयमें दौडने लगे और ऐसे सजोग ढूढे। (५) उन्माद हो बुद्धि नष्ट हो जाय हिताहितका विचार न कर शके। जैसे पागल मनुष्य अच्छी वस्तु फक देता है और खराब ग्रहण करता ह वैसे ही विषयी जीव परम सुखके मूल ब्रह्मचर्यका त्याग अनत दु खदाई कामभोगमें सुख समझता है। (६) दीर्घकाल तक दुख दे ऐसे गभीर और भयकर रोग प्राप्त हो। इस जन्मम तो रोग पैदा हो और कदाचित् बच जाय तो पुनर्भवमें तो अनत रोगमय जन्म प्राप्त हो (७) केवली भगवान परूपित धर्मसे भ्रष्ट हो जाय।

एक वाड तोडनेसे ये सात हानिया होती है ऐसा श्री प्रभु फरमाते है तो जो अनेक वाड तोडे उनकी क्या दशा हो ?

एसा समझ नव वाड और दसवें किल्लेद्वारा दृढतापूर्वक आत्म-रक्षा करना जरूरी है । इन दश नियमोंका पूरा पालन नहीं करनेसे आज शुद्ध ब्रह्मचर्य बहुत दुष्कर हो गया है, वालकोंमे विकार, विद्यार्थी विधवा, विधुर और त्यागीओंमें अनेक स्थान गुप्त दोष लगते है, तथा मन कुशील, दृष्टि कुशील, स्वप्न कुशीलसे विरलेहि त्यागी त्यागी वचनेको समर्थ है इन सब दोषोंका कारण ऊपर कहीं हुई दश समाचारीके पाल-नमें खामी है.

इन दश वोलोंको दस समाचारी कहते हैं और ये दस प्रकारका ब्रह्मचर्य भी समझा जाता है । जो एक वाड भी तोडता है वह ब्रह्मचर्य तोडता है एसा शास्त्रमें फरमाया गया है. इस लिये मुझे अपने आत्महितके लिये दसो नियम बराबर पालना चाहिये । जिसने शुद्ध ब्रह्मचर्य पालकर अपने आत्मस्वरूपको पहचान लिया है वह ससार समुद्र तर गया है । सिर्फ उसे छोटीसी नदी तरना रह जाती है. और वही सच्चा सुख प्राप्त करता है इसलिये मैं भी आनदसे यह व्रत और यह नियम पालूगा ।

(१७) दिन चर्याकी २१ भावनाएँ

जिस समय जो कार्य करते हों उस समय उससे सम्बन्ध रखनेवाली उत्तम भावनाए अवश्य भावें। श्री भरत चक्रवर्ती महाराजने ऐसी भावना से ही कर्म के बधन कम किये थे और विशेष बलवान भावना प्रकट होते ही सर्व घाती कर्म क्षयकर अनत ज्ञान प्राप्त किया था।

किस समय कैसे विचार करना सो बताते है

(१) प्रात काल उठकर मल मूत्रकी बाधा दूर करते विचारे कि-शरीर बाधा दूर होकर सुख मालूम होता है उससे अनत गुना सुख क्रोध, राग, द्वेष, मोहरूपी भाव बाधा दूर करने से प्राप्त होगा जिस दिन यह भाव बाधा दूर करूगा वही दिन धन्य होगा अशुचि के भडार शरीर परसे मोह हटेगा सब पदार्थोंको मल रूप बनाने वाले शरीर पर से मोह-राग नष्ट होवेगा और इस शरीरसे सत्कर्म करलुगा तभी सत्य सुख प्राप्त होगा

(२) दाँतुन करते-विचारे मुहको साफ करता हू उसी प्रकार आत्माको स्वच्छ करूगा तब वही दिन धन्य होगा मुख स्वच्छ करने जो आनद होता है उससे अनत गुना आनद आत्माको स्वच्छ करने से होगा

(३) स्नान करते हुए-शरीरका मैल दूर करता हू उसी प्रकार क्रोध, मान, कपट, लोभ, विषय, कषाय (क्रोधादि) रूपी आत्माका अतरग मैल दूर करूगा वही दिन धन्य होगा

दोहा-आत्म ज्ञान वह तीर्थ है, गुणमे और अद्भूत ।
स्नान कर उस तीर्थ में, त्यागू मेल अखूट ॥ १ ॥

(४) कपडे पहिनते हुए विचारे शरीरकी रक्षा और शोभा करता हू उसी प्रकार आत्माकी रक्षा व्रत-नियमसे और शोभा ज्ञान-ध्यानसे करना श्रेयस्कर है ।

(५) रसोई करते हुए विचारे शरीर पुष्ट करनेके वास्ते भोजन करता हू उसी प्रकार आत्माको पुष्ट बनानेके लिये ज्ञानरूपी अमृत भोजनके साधन प्राप्त करना श्रेयस्कर है ।

(६) रसोई में जितना उपयोग जयना (जीव रक्षा पर लक्ष) लेती है और अपने हाथसे ही काम करने मे जितना पाप घटता है उतना शेठ शेठानी बनकर दुसरोंसे काम करानेमे नहीं घटता और उलटे पाप ज्यादा बधता है, इसलिये मुझे धिक्कार है निर्दोष गौचरी करूगा या जयणासे सब काम अपने हाथसे ही करूगा और पाप घटाऊँगा वही दिन धन्य होगा -

(७) भोजन करते समय-विचारे स्वाद करके खाता हू, अनेक वस्तु खाता हू, इसलिये मुझे धिक्कार है थोडे पदार्थो में स्वाद जीतकर भोजन करना हितकारी है. भूख बिना

भोजन करना विषके बराबर अहितकर है। बहुत भूख लग नेपर सादा पथ्य और जरूरत हो उतना भोजन करना आरोग्यताका मूल है।

अजीर्णके छ: चिन्ह में से एक भी चिन्ह मालूम होने पर भोजन त्यागनेवाले (उपवास करनेवाले) को कभी दवा नही लेनी पडती वह सदा निरोगी और सुखी रहता है तथा दीर्घायु पाता है

(१) अधोवायु म दुर्गंध (२) माल में दुर्गंध (३) पतली दस्त (४) खराब डुकार (५) भोजन पर अरुचि (६) शरीर भारी या पेट भारी होना। छ. अजीर्णके इन चिन्हकी सदा परीक्षा करके दु खसे बचना चाहिये

(८) बर्तन साफ करता हू, उसी प्रकार आत्माके मैलको तप सयमसे शुद्ध करूगा वही दिन धन्य होगा

(९) कचरा कडे (कठिन) झाडसे निकालता हू, इसलिये मुझे धिकार है । दुसरोसे निकलवाता हू, इसलिये मुझे धिकार है जयनासे कोमल रजोहरणसे कचरा निकालूगा और आत्मा में भरे हुए क्रोध, मोहरूपी मलीन भाव कचरा ज्ञान ध्यान, तप, सयमसे दुर करूगा वही दिन धन्य होगा

(१०) एक जीवन के लिये कमाता हू उसी प्रकार सदाके लिये पर लोककी खर्ची धर्मरूपी धन इकठा करूगा ॰ दिन धन्य होगा

(११) तिजोरीका धन यही रहेगा सुपात्रको दिया हुवा दान, ज्ञान, उन्नति, और अहिंसा साथ में चलेगी इसलिये धन संग्रह कर खुश होनेकी अपेक्षा उत्तम कार्यों में धन खर्च कर खुश होना श्रेयस्कर है ।

(१२) डीब्बी के समान शरीरकी चिंता करता हू और रत्नके समान चेतनकी रक्षा करना भूल जाता हू इसलिये मुझ धिक्कार है ।

(१३) डिब्बीके समान शरीर दु खी रोगी होतेही उपाय करताहू पर रत्न समान चैतनका अज्ञान, क्रोध, लोभ, मोह, विषय रूपी चोर नाश करते है तोभी खुश होता हू, इसलिये मुझे धिक्कार है ।

(१४) पाच इद्रिय रूपी चोर चेतनका ज्ञान चारित्ररूपी धन लूटते हैं और काम भोगरूप अग्नि लगाते हुए आत्म धन और आत्म सुखका नाश करते है उन्हें हर्ष से मदद देता हू, इसलिये मुझे अनतवार धिक्कार है ।

(१५) चेतनको भूलकर परिवार, शरीर, कीर्ति और वैभव में अपना मन मानता हू यह अज्ञान और मिथ्यात्व नाश होओ और सत्य, ज्ञान और सचारित्र प्रकट होओ ।

(१६) शरीर सेवा में सब आयुष्य, धन और शक्ति व्यय करता हू पर आत्महित, कि जो शरीरसे भी अनत गुना जरूरी है, उसके लिये प्रमाद (आलस्य) करता हू, इसलिये मुझे धिक्कार है ।

(१७) नीचे लिखे हुए मुद्रालेख बड अक्षरोंमे लिखकर घरमें टाग दवे और बारम्बार पढे। सुनिश्चय, गभीरता, मौन, विचारशीलता, निर्भयता, अहिंसा, सत्य, ममाणिकता, ब्रह्मचर्य, सतोष, सयम, क्षमा, धैर्य, सुपुरुषार्थ, आलस तजो, विचारके पालो, निंदा त्यागो, गुण देखो, भूल मत छिपाओ बुरे विचार वेही नरक, शुभ विचार वेही स्वर्ग, विचार परम ज्ञान, सत्सग परम लाभ, सतोष परम धन, समभाव परम सुख, क्रोध समान विष नहीं क्षमा समान अमृत नहीं, गर्व समान शत्रु नहीं, विनय समान मित्र नहीं, कुशील समान भय नहीं, शील समान निर्भय नहीं, लोभ समान दुःख नही, सताप समान सुख नही, अनियमित काम काम नहि है। फिजूल काम में वखत नहि लगाना उसे अच्छे काम के लिय पूरा वखत मिलता है

(१८) दिनके चार भाग करके चलना छ घट निंद्रा (सोना), छ घट व्यापारादि कामकाजके, छ घट शरीर रक्षा और अन्य कार्य छ घट आत्महितके कार्य सत्सग धार्मिक पठन पाठन मनन करना, ध्यान, मौन समाधि आदि इस प्रकार उत्तम गृहस्थ जीवन प्राप्त हाओ।

(१९) हमेशा आवश्यकताए घटाओ, सयम, त्याग और ज्ञान बढाओ, ऐसी शक्ति प्राप्त हाओ।

(२०) दान, पुण्य और सुकृतके काम, परोपकार नही पर ये मेरी आत्मा पर ही उपकार है दूसरोंका भला नहीं

पर मेरी खुदकी आत्माका ही भला है और परलोकमें यही मेरे साथ चलेगा। आजतक मैंने मिथ्या मोह और अज्ञान के कारण शरीर भोग और परिवारके लिये बुद्धि, शक्ति, और धनका व्यय किया है अब उसमें काट कसरकर सब शक्ति, बुद्धि, और धन सत्कार्य में लगाउंगा

(२१) रातको सोनेके पहिले दिन में किये हुए सब काम यादकर दोष और पापका अंत करणसे पश्चात्ताप कर उन्हे दूर करनेका सकल्प करू और पवित्र काम ज्यादा करू ऐसी भावना लाउ। एक नोंध (कोपी) रखकर उसमें अपने गुण और दोष लिख लेना और दोष घटानेकी ओर अधिक चिंता रखना जिससे जीवन में बहुत सुधार होगा। यह भाव प्रतिक्रमण (पापका त्याग) है और ऐसा करनेसे आत्मा शुद्ध होती है

पशु पक्षीसे अच्छे बनना हो तो यही मार्ग है। वे मूगे प्राणी उन्नति मार्ग मे मद बुद्धि है। और मैं मनुष्य तीव्र बुद्धि वाला हू इसलिये उनसे ज्यादा खराब और ज्यादा अच्छाभी बन सकता हू मैं अधिक अच्छा बननेकी इच्छा रख प्रयत्न करता रहूँगा

---

(१८) व्याहकी इच्छा रखनेवाले और व्याहे हुए पुरुष और स्त्रीकी भावनाएँ।

(१) युवापन समुद्रके तूफान जैसा है, इस पर पूर्ण सयम हे और जीवन जहाज पवित्र रीतिसे पार लग जाय, ऐसा सयम प्राप्त होओ

(२) पति पत्निका सबध भोगके लिये नहीं पर नीति और धर्मके प्रत्येक कार्यमें मददगार मित्रके सम्बन्ध के समान समझूगा

(३) एक मन अनाज खाते है तब १ सेर लोहू बनता है और एक सेर लोहूका सवा तोला वीर्य होता है यह वीर्य शरीरका चैतन्य है, बल है, और सुख दिर्घायु, बुद्धि और धर्म मे अमृत समान है इसकी हमेशा रक्षा करू, ऐसी सद्बुद्धि रहो।

(४) जिस तत्व (वीर्य) की मगज, आख, कान आदि इद्रिया और शरीरके अगोपागका पोषण करने म बहुत आवश्यक्ता है वह विषय सेवन कर नाश करडालनेकी आत्म घातक प्रवृत्ति पर सयम रहो।

(५) उत्तम सतानकी जरूरके उचित समय के सिवाय मैथुन करना जीवन और सुखका नाश करना है उसे नीति

शस्त्रवाले व्यभिचार कहते हैं इससे हमेशा बचू, ऐसा संयम प्रकट होओ।

(६) गर्भकालमें और बालक तीन वर्षका हो तबतक अखंड ब्रह्मचर्य पालकर अपनी और अपने संतानकी जिंदगी और चारित्रकी रक्षा करू, ऐसी बुद्धि रहो (ऐसे नियम से न रहने से संतान विषयी और रोगी तथा अल्प आयुवाले होते है।

(७) एकवक्त विषय भोग करने से दस दिनकी आयुष्य कम होती है एक वर्षके विषयसे दस वर्षकी आयुष्य घटती है और जो कदाचित विशेष जीवित रहे तो दु खमय जीवन व्यतीत करना पडता है, इसलिये अखंड ब्रह्मचर्य पालन करनेकी शक्ति प्राप्त होओ

(८) नॉवेल, डिटेक्टिवकी पुस्तकें, नाटक सिनेमा, वेश्या नृत्य, मसालेदार खुराक, फैशन चाय, और विलासी जीवन से बचना वीर्य राजाकी रक्षा करनेके समान है। सदा "वीर्य" की रक्षा होओ।

(९) जितना जवानी में संयम रह सकता है, उतनी ही दीर्घायु और सुख मिलता है और वृद्धावस्था में अल्प दुःख प्राप्त होते हैं।

(१०) दम्पत्ति में अलग बिछाने रखूगा, विषयी चेष्टा तजूगा और नैतिक, धार्मिक, वार्तालाप करके स्वपर (दोनों) का जीवन सुधारूगा.

(११) पर स्त्री (पर पुरुष) की इच्छा नरक द्वार है। शरीर, धन, बुद्धि, यश, धर्म और सुगति नाश करनेवाली है। इससे हमेशा बचूंगा ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा लेता हूं

(१२) रावण राजा जैसे तीन खंडके स्वामी भी पर स्त्रीकी इच्छा मात्र से राज, वैभव कुल और अपने शरीरका नाश कर बैठे और नरक गति प्राप्त की तथा आज तक इस पापके लिये उनका अपयश गाया जाता है तो दूसरे साधारण मनुष्यकी कैसी बुरी दशा होगी ? ऐसा समझ मैं हमेशा के लिये पाप-बुद्धि त्यागता हूं और पवित्र रहनेकी प्रतिज्ञा लेता हूं यह प्रतिज्ञा यह शरीर रहेगा वहा तक पालूंगा।

(१३) जिस प्रकार अग्नि, घी, तेल, और लकडीसे नहीं बुझ सकती पर जोरसे बढती है उसी प्रकार विषयेच्छा भोगसे शांत नहीं होती परन्तु बहुत बढती है इसलिये भोग पर पूर्ण काबू रखनेका दृढ संकल्प करता हूं।

(१४) जो जलते है वेस पदार्थ दूर कर बहुत ज्यादा पानी डालनेसे अग्नि शांत हो जाती है उसी प्रकार विषयके साधन दूरकर वैराग्यमय विषय पढ़ने, सुनने और मनन करनेसे, कामाग्नि शांत हो जाती हैं और परम शांत, सच्चा सुख अनुभव होता है वह मुझ प्राप्त होओ।

(१५) पुरुषका २५ वर्ष और स्त्रीकी सोलह वर्षकी उम्र तक मुख्य धातु कची होती है इस कारण इसके प्रथमका

सयोग अत्यत हानि करता है। और इसके फल स्वरूप अनेक रोग आ घेरते है, शीघ्र वृद्धावस्था आ जाती है, मद बुद्धि और अल्पायु प्राप्त होता है और सतान भी ऐसीही प्राप्त होती है जिससे दुगुना दु ख उठाना पडता है, एक अपना और दुसरा सतानका और वश परम्परा, देश, जाति तथा समाजको दु खी बनानेका घोर पाप लगता है, इसलिये इन सब दोषोंसे बचनेका सतत् प्रयत्न करना चाहिये।

(१६) पुरुषकी २५ वें और स्त्रीकी १६ व वर्षकी उम्रमें पुरुष धातु पकती है परतु उनके शरीर म पूर्ण होनेका समय पुरुषके लिये ४० वा वर्ष और स्त्रीके लिये २५ वा वर्ष है जो इस आयु तक शुद्ध ब्रह्मचर्य पालते है वे दिव्य मनुष्य होते हैं और उनकी सतान महा वीर रत्न होती है इसलिये इस समय तक मैं ब्रह्मचारी रहू, ऐसी बुद्धि प्राप्त होओ।

(१७) ज्या अडको हिलाने से जीव मृत्यु पा जाता है वसी प्रकार कच्ची उम्र म विषय सेवन करने से शरीर और सुख नष्ट हो जाते हैं इसलिये मेरे स्वयके हितार्थ में ब्रह्मचर्य पालनेका दृढ सकल्प लेता हू

(१८) जवानी में बचाया हुआ पैसा और वीर्य वृद्धावस्था में परम सुखदायक होता है इसलिये दोनोकी रक्षा करने में तत्परता रहे, ऐसी इच्छा जागृत होओ।

(२) गर्भ रहनेके समय दम्पतिकी भावना विद्वान, सदाचारी, महावीर सतान होनेकी नहीं रहती, केवल विषय वासनाकी रहती है जिससे प्रजा विषयी बनती है ।

(३) गर्भके समय अखड ब्रह्मचर्य न रखनेसे सतान विषयी होती है, कारण माताकी और गर्भकी नाडी एक होती है जिससे गर्भ भी गुप्त विषय सेवन करता है. माता हसती है तो गर्भ हसता है माता रोती है तो गर्भ भी रोता है माता दु खी होती है तो गर्भ भी दु खी होता है और माता सुखी होती है तो गर्भ भी सुखी होता है यह धर्म शास्त्रोंका फरमान है जो अमकट-गुप्त अवश्य होता है । दुधपान के कालमें शुद्ध ब्रह्मचर्य नहि पालनेसे विषयी तत्त्व दुध में मिलते है और बालक शिघ्र विषयी बनते हैं इस वास्ते खूब ब्रह्मचर्य पालना जरूरी है

(५) बालक सोते हैं वहा विषय सेवन करनेसे वे भी कुटेव सीखते है । कोईवार बालक जागते होते है परतु चुपकी से पडे रहते है यदि निद्रामें हो तो भी विषयी वातावरण तो अवश्य बूरी असर करता ही है

(६) खराब सगति, साथ में सोने तथा एकात में खेलने से भी किसी २ को कुटेव लग जाती है जिस प्रकार अडेको हिलाने से उसमें से जीव बिना निकले ही मर जाता है, उसी प्रकार बालकों के कुटेव करते समय बीय तो नहीं

विस्त्रता पर पेशाबके साथ जाना शुरू हो जाता है इसीको धातु स्रवका रोग कहते हैं (बालक और कन्याओंकी कुटेव के कारण उनकी बुद्धि, बल, सुख, आयुष्य, पुण्य और धर्मका नाश हो जाता है ऐसा समझ ऐसी कुटेवका जीवन पर्यंत त्याग करनेकी खास हिदायत है) माँ बापको इसके लिये साप व अग्निसे बचानेकि जितनी सावधानी है उससे हजार गुणी ज्यादा सावधानी रखना जरूरी है

(७) खराब, विषयी नॉवेलोंका पढना, मसाले और मगाइका भोजन, लग्न और भोगी जोडी देखना तथा ऐसी ही बाते करना, गदी हवामे रहना प्रजाको विषयी और रोगी बनाती है ।

(८) ये सब दोष जो त्याग करते है और अपने बालको के लिये अनेक कष्ट और पाप सहकर भी लक्ष्मीका हक देने की जिज्ञासा रखते हैं वे अगर उन्हे आरोग्य और सदाचारकी सची मिलकियत (पूंजी) देवगे तो वे मातापिता सच्चे तीर्थ स्वरुप हैं ।

(९) उपरोक्त सब नियम पालकर बालेका को खेल भी नैतिक और धार्मिक ससार पडे ऐसे दे और सादे वस्त्र, सादा सात्विक भोजन और अच्छी सगतमें रख सात वर्षकी उम्र में उन्हे विद्यालय (गुरु कुल) में–जगल में २५ वर्ष तक सुशिक्षा दे तो वह सतान महा वीर, धीर और मनुष्यो में रत्न समान पैदा होती है ।

(२) गर्भ रहनेके समय दम्पतिकी भावना विद्वान, सदाचारी, महावीर सतान होनेकी नही रहती, केवल विषय वासनाकी रहती है जिससे प्रजा विषयी बनती है ।

(३) गर्भके समय अखड ब्रह्मचर्य न रखनेसे सतान विषयी होती है, कारण माताकी और गर्भकी नाडी एक होती है जिससे गर्भ भी गुप्त विषय सेवन करता है. माता हसती है तो गर्भ हसता है माता रोती है तो गर्भ भी रोता है माता दु खी होती है तो गर्भ भी दु.खी होता है और माता सुखी होती है तो गर्भ भी सुखी होता है यह धर्म शास्त्रोका फरमान है जो अमकट-गुप्त अवश्य होता है । दुधपान के समय शुद्ध ब्रह्मचर्य नहि पालनेसे विषयी तत्त्व दुध म मिलते है और बालक शिघ्र विषयी बनते हैं इस वास्ते खूब ब्रह्मचर्य पालना जरूरी है

(५) बालक सोते हैं वहा विषय सेवन करनेसे वे भी कुटेव सीखते है । कोईवार बालक जागते होते हैं परतु चुपकी से पडे रहते है यदि निंद्रामें हो तो भी विषयी वातावरण तो अवश्य बूरी असर करता ही है

(६) खराब सगति, माध म सोने तथा एकात में खेलने से भी किसी २ को कुटेव लग जाती है जिस प्रकार अडका हिलाने से उसम से जीव बिना निकले ही मर जाता है, उसी प्रकार बालकों के कुटेव करते समय वीय ता नहीं

निकलना पर पेशाबके साथ जाना शुरू हो जाता है इसीको धातुक्षयका रोग कहते है (बालक और कन्याओंकी कुटेव के कारण उनकी बुद्धि, बल, सुख, आयुष्य, पुण्य और धर्मका नाश हो जाता है ऐसा समझ ऐसी कुटेवका जीवन पर्यंत त्याग करनेकी खास हिदायत है) माँ बापको इसके लिये साप व अग्निसे बचानेकि जितनी सावधानी है उससे हजार गुणी ज्यादा सावधानी रखना जरूरी है

(७) खराब, विषयी नॉवेलोका पढना, मसाले और खटाईका भोजन, लग्न और भोगी जोडी देखना तथा ऐसी ही बाते करना, गदी हवामे रहना प्रजाको विषयी और रोगी बनाती है।

(८) ये सब दोष जो त्याग करते है और अपने बालको के लिये अनेक कष्ट और पाप सहकर भी लक्ष्मीका हक देने की जिज्ञासा रखते है वे अगर उन्हे आरोग्य और सदाचारकी सच्ची मिलकियत (पूंजी) देवगे तो वे मातापिता सच्चे तीर्थ स्वरूप है।

(९) उपरोक्त सब नियम पालकर बालेका को खेल भी नैतिक और धार्मिक ससार पडे ऐसे दे और सादे वस्त्र, सादा सात्विक भाजन और अच्छी सगतमें रख सात वर्षकी उम्र में उन्हे विद्यालय (गुरु कुल) में-जगल में २५ वर्ष तक सुशिक्षा दे तो वह सतान महा वीर, धीर और मनुष्यो में रत्न समान पैदा होती है।

(१०) पशु, पक्षी, भाय सतान काल के सिवाय मैथुन नहीं करते जिससे वे निरोगी और पुष्ट रहते हैं मनुष्य जो पशु पक्षीके समान भी नीति न पालें तो उनसे भी हलके कहे जाते हैं अर्थात् दम्पतिको सतान कालके सिवाय हमेशा ब्रह्मचारी रहना चाहिये ।

(११) प्रत्येक सद्गुण सुख देता है और पुरानी बुरी आदत छोडते शरूआतमें दु:ख मालूम होता है परतु अतमे वही त्याग परम सुखदायक हो जाता है, इसलिये उपरोक्त सब सद्गुण प्राप्त करना परम हितकारी और सरल है ऐसा समझ उन्हे अगिकार करना चाहिये

(२०) गृहस्थाश्रममें रहनेवालोकी भावनाएँ

(१) शुद्ध ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने में असमर्थ आत्माओंको परस्पर धर्म नीति और व्यवहार में मदद देनेवाले योग्य मित्रकी आवश्यकता रहती है और वह मित्र पुरुषको अपनी स्त्री है और स्त्रीका पति है अर्थात् यह सम्बन्ध सिर्फ भोगके लिये नहीं पर भाग पर सयम रखनेके लिये है जो वैभव में अच्छी शिक्षा दे और सन्मार्ग पर चलावे तथा विपत्ति में धैर्य दे और आत्म भोग देकर परस्पर सेवा करने में तैयार होवे यह पति पत्नि है, यह खास

ध्यान में रखकर मैं पवित्र गृहस्थाश्रमी बनूगा । विषय संयम मेरा मुख्य ध्येय रहेगा संतानको बाल्वय से ही निर्भय, सत्यवादी और क्षमाशील बनाऊगा

(१) हाऊ आया, बावा ले जायेंगे आदि शब्द बोलनेसे बालक डरपोक बनता है ।

(२) बालकको कुछ कहकर उस मारदो और 'मत कर' आदि शब्द कह लाड करो तो वह मारना सीखता है। अच्छे गहने कपडे पहिना कर शिणगार ने से विलासी तथा शीघ्र विषयी बनता है. खूब, बारबार अथवा भारी खुराक खिलानेसे बालक रोगी बनता है

(३) मस्तक पर मारने से मगजशक्ति घटती है और तमाचा मारने से "एडीशन" जैसे भी जीवन पर्यंत बहरे बनते है. बालकको कभी नहीं मारना चाहिये शांति, प्रेम, और युक्तिसे सदाचारी बनाना चाहिये

(४) खोज गया हिंडोला, जड, मँगता आदि शब्द बोलनेसे बालक गाली देना सीखता है ।

(५) बालकको आवश्यकतासे ज्यादा धाक में रखनेमे उसकी प्रत्येक विकास पाती हुई शक्तियाँ घटती हैं और वह बचने के लिये झूठ और कपट (बनावटी बाते बनाना) सीखता है ।

(६) सचारित्र रहित नौकरसे बालक पलाया जाय तो वह बच्चेको रोनेसे चुप रखने के लिये वह उसका गुप्त

भाग पपोल कर नाळकके लिये महा भयकर हानि करता है या अन्य दूसरी कुटेव सिखाता है, इसलिये बालकको हमेशा अच्छी सगत में रखना चाहिये.

(७) बालगोली, बालामृत या कोईभी बाल औषध पिलानेकी आदत न डाल, कारण शरीरकी प्रकृति दवा के वश हो जाती है अधिक और अच्छे २ पदार्थ खिलाने से रोग बढता है। मिथ्या प्यार करना उसका शत्रु बनना है आदि सतान पालने और सुधारनेकी पुस्तकें पढ ज्ञान तथा अनुभव प्राप्त कर गृहस्थाश्रम प्रमाणिक रीतिसे चलाऊंगा। (पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेवालाही प्रमाणिक बन सक्ता है)

३ परिवार और सतानकी सेवा कर उन्हें धर्म में लाना मैं मेरी जरूरी फर्ज समझूंगा ।

४ क्षमा से ही सब काय सिद्ध होते हैं। क्रोधसे बुरा हुआ सब कार्य बिगड जाता है। ज्ञान तथा बुद्धि नष्ट हो जाती है। और सुख के सयोग भी दु ख रूप बन जाते है, इसलिये हमशा मैं क्रोधको छोडूंगा। क्रोधी आदतसे मित्र भी शत्रु हो जाते है, क्रोधी मनुष्यसे कोई काम पूर्ण सफल होना कठिन है कारण वह कष्ट सहन मे क्षमा नहिं रख सकता तथा उसके शत्रु बहुत होते है

५ मैं हमेशा कुटुम्ब-क्लेश सहनशीलता से दूर कर सम्प और सुलह कराऊंगा। सप-शातिसे दिव्य सुख है।

इसके धनकी जरूरत नहि है केवल श्रद्धा और गुणानुराग चाहिये

६ पतिको भोगका आनंद देना अपना कर्तव्य समझनेवाली स्त्री राक्षसी के समान है और पति तथा अपने सौभाग्य का नाश करनेवाली है इसी प्रकार जो पुरुष अपनी स्त्रीको विषयका साधन समझता है वह राक्षसके समान है। वह अपना खुदका, स्त्रीका और संतानका नाश करनेवाला है इस पापसे मैं दृढता पूर्वक बचूंगा.

७ शरीरकी शोभा दूसरोंको बताना पाप है।

८ जीवन पर्यंत सदाचारी रहूंगा और हमेशा नीची दृष्टि रख विकार रहित चलूंगा पर स्त्री (पुरुष) को देखनेसे ही विकार जगता है। यह दृष्टिकुशील है। मनके कुविचार मनकुशील है

९ घरके प्रत्येक मनुष्यको अच्छी शिक्षा दे, नीतिवान और धर्मी बनानेका कर्तव्य पालन करूंगा मेरी ऐसी हमेशा सद्‌बुद्धि रहे।

१० परिवार, संतान और सेवकको सुशिक्षा तथा सदाचारकी पूंजी और पुरस्कार दूंगा क्योंकि येही उसे सुखी करेंगे।

११ ज्ञान प्रचार और परमार्थके लिये सर्व शक्ति और धन हमेशा दूंगा क्योंकि यही मेरा है और शेष दूसरोंका है सत्कर्म में खर्चा हुआ धन पुण्यरूपसे साथ चलेगा

कमसेकम पैदाशका चौथा हिस्सा पवित्र कामों में अवश्य लगाऊंगा

१२ गृहस्थाश्रमका मुख्य धर्म अतिथि सत्कार और अन्नदान औषधदान, वस्त्रदान, और विद्यादान है मैं चारों प्रकारका दान उचित रीतिसे करूंगा और विद्यादान सर्वोत्तम समझ उसपर विशेष लक्ष्य लगाऊंगा

१३ जिस प्रकार कमल कीचड में रहकर भी स्वयं कीच से अलग रहता है और कीचसे सुगन्धी तत्व खींच आप सुगंधवाला बनता है उसी प्रकारमैं भी संसारमें रहकर हिंसा, असत्य, विषय, क्रोध, मोहसे बचूंगा और दान धर्मादि शुभ तत्त्वोंका लाभ लूंगा

(१४) जिंदगीके चार भाग कर एक भाग विद्या सीखनेमें, ब्रह्मचर्याश्रम में, एक भाग गृहस्थाश्रम में, एक भाग ब्रह्मचर्य सहित त्यागीके गुणोंका अभ्यास करने में या साधु जीवनमें अभ्यास और अनुभव ज्ञान प्राप्त करनेमें और एक भाग सब प्रवृत्ति त्याग उत्कृष्ट आत्म ध्यानमें विचरने में लगाऊंगा और यह कर्तव्य हमेशा याद रखूंगा

(२१) व्योपारीकी भावनाएँ

(१) द्रव्य, धन, प्राप्त करनेके लिये मैं दुकान खोलता हूं उसी प्रकार धर्म धन कमानेकी इच्छाकर धर्मकी दुकान खोलूंगा वही दिन धन्य होगा

(२) द्रव्य मालका लेनादेना करता हू उसी प्रकार भाव माल ज्ञान, दर्शन, चारित्र लूगा दूगा वही दिन धन्य होगा.

(३) व्यापार में सत्य, निष्कपटता प्रमाणिकताका, पूर्ण पालन करूगा, और धर्म व्यापार करनेका सामर्थ्य प्राप्त करूगा.

(४) जमा खर्च करके ससारका हिसाब लगाया जाता है इसी प्रकार पुण्य पापका हिसाब रोजरोज तपास कर पाप त्यागूगा वही दीन धन्य होगा

(५) द्रव्य मालकी दलाली करता हू उसी प्रकार धर्मकी दलाली करुगा वही दिन धन्य होगा दलालीमें सदा सत्यका पालन होओ

(६) व्यापारका अर्थ दुसरोंकि मुश्किल दुर करना है जो चीज जिस समय चाहिये वह आसानीसे पूरी करे सो व्यापारी है मै थोडे नफे में नीति, सत्य और इमानदारी से ही व्यापार करूगा

(७) धन संग्रह करे सो लुटेरा है। धन बाटे, सबका दया सा व्यापारी है। मै लुटेरा नहिं बनुगा परंतु धन आवेगा सो दानवीर कार्नेगीके समान (पंदरह क्रोड पाउंड कमाया सो सब निर्वाह खर्चके सिवाय दान दिया) मैं भी दान दुंगा

(८) देश जाति और धर्मको हानि पहुचानेवाली वस्तुओंका वैपार आडत व दल्लाली कभी नहीं करुगा मिट्ठ झुठ सुखके लिये इस लोक और पर लोकका समुद्र जितने दु ख नहीं उठाउगा

(९) शास्त्रमें प्राय सदुपदेश सुननेके बाद सबहि उत्तम मोक्षाभिलाषी श्रोता श्रा (श्रावको) ने नया धन व नये भोग नही बनाने तथा हमेशा घटानेकि प्रतिज्ञा लीहै। मै भी अब धन और भोग जो भयंकर भावरोग है घटाउगा आरंभ (हिंसा) और परिग्रह निश्चयसे दु ख दुर्गुण और दुर्गतिके बढाने वाले है।

(२२) समाज संचालकोकी भावनाएँ

(१) राजा बादशाह, वॉयसरोय, गवर्नर, ए जी जी कलेक्टर, ठाकुर, जागीरदार रईस सूबा, तहसीलदार आदि सब प्रजाकी सेवा स्वीकार करनेके पद अर्थात् दीक्षा है

गण अपने उपकारकके सर्व कुछ देनेको कृतज्ञतासे तैयार रहते हैं. इस नीतिका दुरुपयोग कर मैं क्रूर धन संचय करता तथा विषय विलासी बनना और प्रजाके दुःखको दूर नहीं करना ऐसा अनीतिमय काम करता हूं सो धिक्कार है। इन सब दोषोंसे मुझेही गभीर दुःख उठाने पडेंगे इसलिये मैं उन्हें सर्वथा त्यागूं यही भावना

केवल जीवन निर्वाहके लिये जरूरी वस्तुएँ लेकर प्रजाकी उन्नतिमें हमेशा सब आमदनी दे देना तथा जरूरत पडे तो अपनी देह भी अर्पण करना चाहिये। यह मेरा कर्तव्य (धर्म) सदा जागृत रहो.

(२) वकील, बॅरीस्टर, सॉलीसीटर, एडवोकेट आदि धंधे समाजके कुसंप, कलह और झगडे मिटानेके लिये है जो मनुष्य अज्ञान, अहंकार, इर्षा और धनलोभ, के वश परस्पर लडकर विनाश पाते हैं उनको शांतिसे हेतु तथा प्रमाण देकर भूल समझाना और सत्य तथा न्याय में सेवा भावसे स्थिर करना मेरा कर्तव्य है। आज ये धंधे केवल खूब धन कमाना, विलास भोगना और तीक्ष्ण बुद्धिरूपी शस्त्रसे निश्चय में निजकी आत्माकी घात करना और मुकदमें प्रतिवादीको हराना है। कलह कुसंप-भाव-हिंसा है। भाव हिंसा मेटनेका परम पवित्र कर्तव्य भूलकर उसी शक्तिसे घोर भाव-हिंसा बढाता हूँ सो धिक्कार है.

(३) मुन्सिफ, न्यायाधीश, पंच, आदि धर्म सत्य प्राप्त कराने में मददगार है। यदि लोभ वश अथवा बिना अनुभव से किसीको हानि पहुँचाता हूँ तो धिक्कार है। मैं सत्य न्याय इनकी कोशिश करूंगा

(४) वैद्य, हकीम डॉक्टर, वगैर प्रजाको बीमारी न आवे ऐसी हमेशा शिक्षा इनके लिये है तथा कोई आरोग्यके नियमोंको भूले और बिमार पडे उन्हें सेवा भावसे निरोग बनानेके लिये है। अब मैंने इसके द्वारा धन कमाना शुरू कर दिया सो धिक्कार है। अब मैं हमेशा मेरे पवित्र धर्मका पालन करनेकी कोशिश करूंगा

शिक्षा-आज हजारों दवा खाने खुलते है करोडो रुपये दवा में नाश होते हैं। दवासे लाभ थोडा और शारीरिक तथा आर्थिक दोनों हानि ज्यादा है रोग हमेशा बढ़ते है यदि अब भी आरोग्य सुख सबको देना हो तो शफाखानें या औषधालयों में जो रकम खर्च होती है उससे ज्यादा या उतनी नहोतो कमसेकम आधी रकम नीचे लिखी शैलीसे खर्च करना जरुरी है प्रिय पाठकगण ! आप शफाखानेंके सचालक हो तो इस मुजब वर्ताव करें यदि नहो तो जो सचालक हों उन महाशयोंकी सेवामें जाकर यह शैली चालू करनेकी नम्र विनती करें

(१) आरोग्य शिक्षादायी साहित्य प्रचार करना तथा शरीर शास्त्रके ज्ञाता (जानकार) प्रतिभाशाली, भाषण

चतुर देशके ऐसे स्री व पुरुष डाक्टर, रखकर हमेशा शफाखानमे बाजारमें, व मोहल्लेमें भाषण दिलावें और हर प्रकारके रोगसे समाजको बचाव इससे जो आज दवाका खर्च है वह बहुत घट जायगा व रोग एकदम घट जायेंगे आरोग्य बढेगा। इस शैलीको नाहीं धारण करनेसे आज औषधालय बढते है और रोगी भी बढ रहे है "Prevention is better than cure" रोग होकर आराम करनेके स्थान मे रोग पैदाही न हो वैसा करना ज्यादा अच्छा है

(५) नोकरी करनेवाले विचारे कि मै यह नोकरी धन सचय, मान बडाई या हुकूमतके लिये नाहीं करता परतु समाज रूपी महातन चलान म अनेक सहायक चाहिये जिसमे मै भी एक छोटा सेवक हू। हिनपत समझना काम चित्तलगाके नहीं करना, खुद योग्य न होते हुवे वह काम करनेको जिम्मेवार होना, इर्षा करना विगेरे अपराध द्वारा स्व-पर हानि करता हू सो धिकार है अब मै एसे सब दोषोको अवश्य छोडूगा

(६) जगत मै चारवर्ण सर्वस्थाने हैं। ज्ञान विवेक बुद्धि धरे धरावे (पढे पढावे) सो ब्राह्मण, पुरुषार्थ प्रेमी न्याय रक्षक सो क्षत्रिय। जरूरी वस्तु अन्न वस्त्रादि उत्पन्न करे तथा व्यवस्था पूरक सेवा भावसे सबको पहुचावे सो वैश्य। शुद्ध भावसे सेवा करे सो शूद्र हैं।

शरीर में मगज बुद्धि सो ब्राह्मण है। भुजा वीरता सो क्षत्रिय है, पेटमें जठराग्नि असार (मल) को दूरकर सार वस्तु (धातुएँ) खींच सब इंद्रियोंको पहूचावें सो वैश्य और पग सो शूद्र (सेवक) है यदि पेट सारी वस्तु खींचकर इतराको न पहूचावे और अपने पास रक्खे तो वह सुख नाहीं परंतु जलोदर रोगके दुःखसे महा दुःखी होता है इस प्रकार मैं व्यापारी बनकर धन सचय कर पासही रक्खू तो जलोदरके रोग समान दुःखी होऊंगा और कुटुंबके झगडे, कोर्ट, वकील वैरिस्टर, चोर, अकस्मात् अथवा मोत-रूपी चीर फाड (ओपरेशन) के दुःख भोगने पडेगें यदि झूठ, कपट, अनीति, अन्यायरूपी मलको त्यागकर, सत्य, न्याय, नीति युक्त पुरुषार्थसे कमाया हुआ धन (सार) एकत्रकर जगतकी उन्नति में दूंगा तोही निरोगी सुखी रहूंगा, ऐसा कर्तव्य सदा जाग्रत रहो। जहा जठराग्नि निर्दोष है वहा सब इंद्रियों और शरीर पुष्ट तथा निरोग है। इसी प्रकार व्यापारी वर्ग नीतिवान पुरुषार्थी पूर्व पश्चात् समाजके हितकी रक्षा पूर्वक व्यौपार करते हैं व संचित शक्ति समाजको अर्पण करते हैं वहा ही सारा शरीर रूपी समाज सुखी रहता है, वह मनुष्य लोक भी देवलोक तुल्य होता है इसलिये मैं सच्चा व्यौपारी बनूंगा।

(२३) विधवा और विधुरके लिये भावनाएँ

(१) मैं सुखी हूं पति पत्निका सयोग आजकल प्राय' भोगके हेतु होता है। इससे बचना ही धर्म है

(२) परमात्मा बननेका मुख्य गुण–ब्रह्मचर्य मुझे प्राप्त हुआ है। यह तीनो लोकके सुखसे विशेष सुख दाता है. जिससे यह मेरा जीवन दु खमय न मानते मैं सुखी समझता हूँ

(३) एकात में स्त्री पुरुषका समागम, बातचीत, पौष्टिक या मसालेदार खुराक, शरीर, शृगार, विलासी प्रसग, नाटक या सिनेमा, वैश्या नृत्य देखना, उपन्यासादि पढना और विषय बढे ऐसे सब अवसरोको मैं हमेशा त्यागुगा

(४) धार्मीक वैराग्यसे भरी हुइ पुस्तके पढूगा। सेवा-भाव, सत्सग, त्याग, और, सयम येही मोक्षके कारण है इन्हे धारणकरनेकी मुझमे शक्ति बढे और येही मेरे सदा सहायक हो

(५) चिंता, शोक, भय और विषयेच्छा, हमेशाके लिये नष्ट होओ।

(६) धैर्य, सत्य, ब्रह्मचर्य, सहित सादा और सयमी जीवन हमेशा रखूगा

(७) मनुष्य जन्म धर्मसेही सफल होता है और वही धर्म पालन करनेके मुझे सब उत्तम सयोग प्राप्त है जिससे मैं यह मोका न चूक अपना जन्म सफळ करूगा.

(२४) रोगी अवस्थासे निरोगी और सुखी बननेकी भावनाएँ

(क्षय आदि अनेक भयकर जूने रोग ऐसी भावना से दूर हो गए है प्रत्येक भावना हमेशा वारवार रोगी पढे अथवा उसकी सेवा चाकरी करनेवालोको रोगीको सम्बोधित कर कहना चाहिय)

(१) मैं निरोगी हू मुझे बिल्कुल रोग नही है मेरे सब रोग दूर हो रहे है। स्नायु बराबर काम दे रहे है। मुझे बराबर भूख लगती है अच्छी तरह पचता भी है, मेरे मनको दुर्बलतासे मुझ वेदना मालूम होती है और वेदनाके विचार से ही मै रोगी बना हू अब रोग के विचार दूर करनेसे मै निरोगी बनूगा।

(२) मेरा मस्तक दु खना दूर हो रहा है मुझे अब शिरमें दु ख नहीं मालूम होता। मगज शात है। और अच्छे विचार कर सक्ता हू। मेरी आखोंकी वेदना मिटती जाती है अब आखे निरोग है मेरी आखे अच्छी पुस्तके पढने जीवोंका देखकर रक्षा करने तथा महा पुरुषो के दर्शने के लिये तैयार है कानका रोग मिटता जाता है। अब कान शुद्ध है और धर्म वचन सुनना चाहते है। नाकका रोग मिटता

जाता है और शुद्ध हवा ले सकता है। जीभ ओर मुह के रोग मिटते जाते हें वे अब निरोग हैं प्रिय, सत्य और हित-कर, विचार पूर्वक, उपयोगी वचन बोल सकते है सादा और पथ्य भोजन रुचि से खा सकता हू। शरीरकी समस्त वेदनाए दूर हो रही हैं म अब पूर्ण निरोगी हू। शरीर को गर्मी आदि सब संयोग आरोग्यवर्द्धक मालूम होते है और तन्दुरुस्त बनाते हैं. हृदयमें खून बराबर साफ होता है ओर बराबर चलता रहता है मन पवित्र व शात है और शुभ विचार कर सकता है।

(२) शास्त्र म भगवान् फरमाते ह कि छ कायके जीवो को मन, वचन, काया से दुख देने से दु ख मिलता है और ऐसेही दु'खदायी सयोग प्राप्त होते है और दुःख न देनेसे तथा दु ख दूर करनेसे सुख मिलता है और सुखदायी सयोग प्राप्त होते है। १ हिंसा २ असत्य ३ अप्रमाणिकता ४ विषयभोग ५ धन मोह ६ क्रोध ७ मान ८ कपट ९ लोभ १० राग ११ द्वेष १२ कुसम्प (क्लेश) १३ कलक देना १४ चुगली खाना १५ पर निंदा १६ हर्ष शोक १७ कपटसे झुठ बोलना १८ और प्रतिकूल समझ अर्थात् मिथ्यात्व अज्ञान ये अठारह पाप मन वचन कायासे सेवन करनेसे, सेवन कराने से या करनेवालेको भला समझने से तीव्र दु ख और घोर अशातावेदनी (कर्कश वेदना) प्राप्त होती है और

अठारह पापका मन, वचन, काया द्वारा त्याग करने से अतिशय निर्मल सुख (साता वेदनी) मिलती है और आत्म ध्यान से अव्याबाध-वेदना रहित सुख प्राप्त होता है

(४) शरीर पुद्गल हे, जड पदार्थ है, रोग शरीर पर असर कर सकता है परतु आत्माको कुछ भी हानि नहीं पहुचा सकता। कारण आत्मा अरूपि, अरोगी अजर, और अमर है शरीर-मोह दूर करने से सच्चा सुख प्राप्त होता है।

दोहा -रोग पीडता देहको, नहीं जीवको खास,
घर वले अग्नि थकी, नहि घरका आकाश ॥

ऐसा विचार कर चिंता शोक भय रहित में परमानद प्राप्त करूगा

(५) अशाता वेदनी, पूर्व कृत पाप कर्मका नाश करती है। वह उपकारी है। पाप न करनेकी शिक्षा देती है। मैं भी अब सब पाप दोषको त्याग दूगा।

(६) रोग में चिंता, भय, शोक करने से रोग अधिक बढता है और नये कर्म बध जाते हैं जिस से भविष्य में भी बहुत दुःख उठाना पडता है। रोगको दूर करने के लिये अत्यन्त पाप से बनी हुई दवा का सेवन करना पडता है जिससे भी पाप बढ़ता है और उसके फल स्वरूप विशेष दुःख प्राप्त होते हैं मैं पापिष्ठ विचार नही करूगा। व हिंसावाली दवाईं नहीं लूंगा

(७) दवा लेने से प्रायः एक रोग मिटता है तो दुसरे अनेक रोग आ घेरते हैं। आजकल दवाओंका प्रचार अधिक है तो रोग भी बढे हैं। सौ रोगी में दवा लेनेवाले प्रायः ९० टका दु:खी दुःखी होकर मरते हैं और दवा न लेनेवाले सैंकडा १० टका मरते हैं. उपवास, तपश्चर्या, ब्रह्मचर्य, पाच इंद्री वश करना, खूब भूख लगे तब सादा पथ्य स-प्रमाण, भोजन करना और क्रोधादि त्याग करने से प्राय. १०० रोगी में से ९९ रोगी सुधर जाते है परिवार, कुटुम्ब चिंता, रोग का भय, और गभराट से रोग बढता है इसलिये उनसे बचना चाहिये। रोग जहरीले तत्त्व बहार निकाल कर शरीर शुद्ध बनानेकी कुदरती है क्रिया है दवासे जहर पीछा डाकनेसे ज्यादा रोग बढाना है।

(८) शरीरके ममत्वसे शरीर पीछा धारण करना पडता है और बहुतसे दुख उठाने पडते है शरीरको सचारित्र में लगा निर्मोही बनने से अशरीरी बन अनत सुख प्राप्त कर लेते है यही परम सुखदाई सिद्धावस्था है।

(९) मै अरोगी हू, अभोगी हू, अशरीरी हू, अक्रोधी हू, अमानी हू, अलोभी हू, निर्मोही हू, तथा अनत केवल ज्ञान, केवल दर्शन, अनत आत्मिक सुख, अनत आत्म शक्ति सयुक्त हू ऐसे मेरे स्वय के शुद्ध गुण है वे मुझे प्राप्त होओ

समास
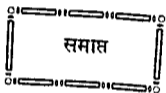
शुद्ध तान लिया है तथापि भूल होवे तो सुधार लेवें व प्रकाशकको विदित करें।

(७) सब कार्य प्रथम भावनामय होकर बाद कर्तव्यरूप परिणमते है जो सदा शुभ भावना होवेगी तो सदा शुभ कर्तव्य व शुभ फल हि मिलेंगे, इसलिये इस आत्मजागृति भावनाको नित्यनियम में वाचन मनन करने की नम्र प्रार्थना है

(८) जगतमें सुखी रहना हो तो अपने गुण व दूसरोंके दोषोंको भूल जाओ और अपने दोष व दूसरोंके गुणोंका प्रगट करो शुद्ध भावकी यह क्रिया इसलोक व परलोकमे मोक्ष (सचा सुख) देवेगी

(९) पढना सो भोजन करना है। मनन करना सो पचाना है। चारित्रमें लाना सो धातु उपधातु बनाकर शरीर पुष्ट करनेतुल्य आत्म स्वभाव प्रगटाना है
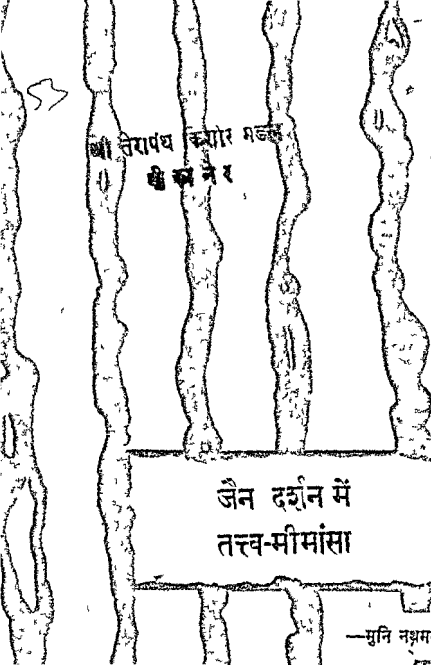
ज्ञान दानका प्रभाव

उत्तम (सम्यक्) ज्ञानका दान वही भाव चक्षुका दान, ग्रन्थ न
ज्ञानका दान वही भाव अभयदान है। कारण अच्छी शिक्षामें सदा
बनकर जन्म मरणसे छूट जाते हैं इससे अनत भवका ... ज्ञानदान है
है। दूसरी चीजोंका दान देनेसे लेनेवालको थोडी उपरकी ...
याने का थोडा पुण्य सुख होता है परंतु उत्तम ज्ञान देनेवाला व लेनेवाला
ज्ञान आराधना करके सचारित्र द्वारा अनत जन्म मरण, रोग, शोक, और
भयके दुःखोंसे छूटकर अनत सुखमय मोक्षपदकी प्राप्ति करता है। सम्यग
ज्ञान दान ही महाश्रेष्ठ दान है। अन्नदानसे एक दिनकी भूख मीटती है
औषधदानसे थोडे दिनके लिये रोग शात होता है अभयदानसे एक
जन्ममें थोडे समयके लिये मरणभय दूर होता है, परंतु उत्तम ज्ञानके
दानसे सब दुर्गुण छूटकर अनत जन्म मरणके दुःखोंसे बच सकते हैं
इसलिये उत्तम (सम्यक्) ज्ञानका दान श्रेष्ठ है। गृहस्थ लोक चारों प्र-
कारका दान हमेशा देते है तथापि ज्ञान दानमें उत्कृष्ठ भाव बताते हैं
जिस ज्ञानसे हिंसा, झूठ बेइमानी विषयवासना तृष्णा, क्रोध, गर्व
कपट लाभ कलह, निंदा, घटे सो उत्तम (सम्यक्) ज्ञान समझना च
ाहिये और जिस विद्यासे हिंसादि कोई एक या अनेक दोष बढे
कुज्ञान समझना चाहिये इसलिये सुज्ञान कुज्ञानका परीक्षा करके हमेश
सुज्ञानकी वृद्धिमें तन, मन, धन, बुद्धि शक्ति अर्पण करना चाहिये
जिससे स्व–पर कल्याण होवे। हरेक पाठशाला, स्कूल विद्यालय, बोर्डिंग
गुरुकुल, व कोलेजमें नैतिक, व धार्मिक, शिक्षा अवश्य पढाना चाहिये
आज इस नियमका पालन थोडा होनेसे पढे हुए विरल विद्वान ही देश
समाज व धर्मकी सेवा करते हैं व उच्च चारित्रशाली भी कम है। अ
सावधानीसे उत्तम नीति व सदाचारके संस्कार डालेंगे तो उत्त
भविष्य देखेंगे।

जैन दर्शन में
तत्त्व-मीमांसा
—मुनि नथम